स्त्री-पुरुष के अनेक मुख—अनेक भावों, मुद्राओं और स्थितियों के—जिनसे लगता है कि ये मुख, ये चेहरे कुछ कहना चाह रहे हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। सम्प्रेषण नहीं हो पा रहा है। कहीं कोई अदृश्य करफ्यू लगा है। कहीं कोई रोक है, दीवार या चौहद्दी है, जिसे इस तरह न तो तोड़ना ही सम्भव हो पा रहा है, न बेधना, न ही आरपार कर देना।

एक निर्देशक के रूप में मैं बड़ी गहराई और प्रभावपूर्ण ढंग से यह बता देना चाहता था कि 'करफ्यू' क्या है, इसका अर्थ क्या है, इसका प्रभाव क्या है। करफ्यू वह नहीं है केवल, जो व्यवस्था द्वारा, कानून और आज्ञा से किसी शहर पर, कहीं भी, किसी समय शांति और सुरक्षा के लिए बाहर से लगा दिया जाता है। 'करफ्यू' दरअसल वह है जो स्वत: अपने आप पर लगा लिया जाता है। यह लगाया जाता है अपने सम्बन्ध-बोध पर, अपने उस दृष्टिकोण पर जहां से, बल्कि जिस चश्मे से हम दूसरों को, इस आसपास के जगत, उसके यथार्थ को देखते हैं। एक 'स्लाइड' द्वारा मैं एक पुल दिखाता हूं। पुल के एक ओर एक स्त्री खड़ी है, दूसरी ओर पुरुष, दोनों एक दूसरे से कुछ कहना चाहते हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। ऐसा कोई कुछ अदृश्य, अजाना है, जो उनके सम्प्रेषण को नहीं होने दे रहा है—यही है 'करफ्यू'। चारों ओर भीड़ है, उस भीड़ में एक मुख किसी को ढूंढ रहा है, कुछ कहना है उसे, पर सम्भव नहीं हो पा रहा है। वह अकेला पड़ गया है उस मानसिक बौद्धिक करफ्यू के कारण जो चारों तरफ अदृश्य रूप से फैला है।

इसके लिए मैंने जाल का ही पूरा मंच और करफ्यू का पूरा दृश्य विधान तैयार किया। जाल का ही बना हुआ कमरा है—जहां हम अपनी बैठक, सोने के कमरे में स्वत: अनजाने कैद हैं। यह जाल हमीं ने अपने हाथों अपने चारों तरफ बुना है। यह सच है कि जीवन

में कभी ऐसी घड़ी आती है, जब हम इस घेरे को तोड़ देना चाहते हैं—पर हम केवल व्यक्ति स्तर पर ऐसा करना चाहते हैं, जो असंभव है। यह संभव है केवल सामाजिक स्तर पर, जिसमें वे तमाम लोग सहभागी हों, जिनसे यह करफ्यू लगा समाज बना है, वे सब इस कार्य में शामिल हों। क्योंकि सब फंसे हैं उस जाल में। वह जाल अनेक स्तरों का है—वह सूक्ष्म भी है और स्थूल भी।

'करफ्यू' नाटक समाप्त होता है इस बिन्दु पर कि करफ्यू फिलहाल टूट गया है, पर हम उससे बाहर नहीं हैं। इसीके लिए नाटक का अंत उस पूजा भाव से है कि फिर ऐसा न हो। पर मैं दर्शकों को एक जबरदस्त धक्का देना चाहता था कि देखो तुम इससे मुक्त नहीं। तुम उसी घेरे में बंदी हो। जब तक तुम अकेले-अकेले इसे तोड़ने के लिए प्रयत्न करोगे, यह असंभव है। सब मिलकर ही इसे तोड़ सकते हैं। अलग होना ही तो है करफ्यू लगाना, मिल जाना, व्यक्ति से सामाजिक हो जाना ही तो है करफ्यू का स्वतः हट जाना, टूट जाना।

मैंने 'करफ्यू' नाटक को आधुनिक भारतीय रंगमंच और नाट्य लेखन की एक महत्त्वपूर्ण रचना पाया है। बहुत गहरी, बहुत मानवीय है इसकी जीवन सामग्री, इसका विषय। इसके रंग-विन्यास, चरित्र और संवाद में अर्थपूर्ण काव्य तत्त्व है। 'करफ्यू' का एक सांस्कृतिक, राजनीतिक आयाम है, पर मुझे जो सबसे अधिक मूल्यवान हाथ लगा, वह है इसमें व्याप्त एक काव्य चेतना, एक गहन अनुभूति, दर्शकों को मैं यही अनुभव देना चाह रहा था। 'करफ्यू' बाहर लगा है, ऐसा क्यों कहते हो? किसी ने हम पर 'करफ्यू' लगा दिया है, ऐसा क्यों मानते हो? देखो न, करफ्यू लगा है हमारे भीतर। हमीं ने लगा रखे हैं। संबंध और है क्या?

स्त्री-पुरुष के अनेक मुख—अनेक भावों, मुद्राओं और स्थितियों के—जिनसे लगता है कि ये मुख, ये चेहरे कुछ कहना चाह रहे हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। सम्प्रेषण नहीं हो पा रहा है। कहीं कोई अदृश्य करफ्यू लगा है। कहीं कोई रोक है, दीवार या चौहद्दी है, जिसे इस तरह न तो तोड़ना ही सम्भव हो पा रहा है, न बेधना, न ही आरपार कर देना।

एक निर्देशक के रूप में मैं बड़ी गहराई और प्रभावपूर्ण ढंग से यह बता देना चाहता था कि 'करफ्यू' क्या है, इसका अर्थ क्या है, इसका प्रभाव क्या है। करफ्यू वह नहीं है केवल, जो व्यवस्था द्वारा, कानून और आज्ञा से किसी शहर पर, कहीं भी, किसी समय शांति और सुरक्षा के लिए बाहर से लगा दिया जाता है। 'करफ्यू' दरअसल वह है जो स्वतः अपने आप पर लगा लिया जाता है। *यह लगाया जाता है* अपने सबंध-बोध पर, अपने उस दृष्टिकोण पर जहां से, बल्कि जिस चश्मे से हम दूसरों को, इस आसपास के जगत, उसके यथार्थ को देखते हैं। एक 'स्लाइड' द्वारा मैं एक पुल दिखाता हूं। पुल के एक ओर एक स्त्री खड़ी है, दूसरी ओर पुरुष, दोनों एक दूसरे से कुछ कहना चाहते हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। ऐसा कहीं कुछ अदृश्य, अजाना है, जो उनके सम्प्रेषण को नहीं होने दे रहा है—यही है 'करफ्यू'। चारों ओर भीड़ है, उस भीड़ में एक मुख किसी को ढूंढ रहा है, कुछ कहना है उसे, पर सम्भव नहीं हो पा रहा है। वह अकेला पड़ गया है उस मानसिक बौद्धिक करफ्यू के कारण जो चारों तरफ अदृश्य रूप से फैला है।

इसके लिए मैंने जाल का ही पूरा मंच और करफ्यू का पूरा दृश्य विधान तैयार किया। जाल का ही बना हुआ कमरा है—जहां हम अपनी बैठक, सोने के कमरे में स्वतः अनजाने कैद हैं। यह जाल हमीं ने अपने हाथों अपने चारों तरफ बुना है। यह सच है कि जीवन

में कभी ऐसी घड़ी आती है, जब हम इस घेरे को तोड़ देना चाहते हैं—पर हम केवल व्यक्ति स्तर पर ऐसा करना चाहते हैं, जो असंभव है। यह संभव है केवल सामाजिक स्तर पर, जिसमें वे तमाम लोग सहभागी हों, जिनसे यह करफ्यू लगा समाज बना है, वे सब इस कार्य में शामिल हों। क्योंकि सब फंसे हैं उस जाल में। वह जाल अनेक स्तरों का है—वह सूक्ष्म भी है और स्थूल भी।

'करफ्यू' नाटक समाप्त होता है इस बिन्दु पर कि करफ्यू फिलहाल टूट गया है, पर हम उससे बाहर नहीं हैं। इसीके लिए नाटक का अंत उस पूजा भाव से है कि फिर ऐसा न हो। पर मैं दर्शकों को एक जबरदस्त धक्का देना चाहता था कि देखो तुम इससे मुक्त नहीं। तुम उसी घेरे में बंदी हो। जब तक तुम अकेले-अकेले इसे तोड़ने के लिए प्रयत्न करोगे, यह असंभव है। सब मिलकर ही इसे तोड़ सकते हैं। अलग होना ही तो है करफ्यू लगाना, मिल जाना, व्यक्ति से सामाजिक हो जाना ही तो है करफ्यू का स्वतः टूट जाना, टूट जाना।

मैंने 'करफ्यू' नाटक को आधुनिक भारतीय रंगमंच और नाट्य लेखन की एक महत्त्वपूर्ण रचना पाया है। बहुत गहरी, बहुत मानवीय है इसकी जीवन सामग्री, इसका विषय। इसके रंग-विन्यास, चरित्र और संवाद में अर्थपूर्ण काव्य तत्त्व है। 'करफ्यू' का एक सांस्कृतिक, राजनीतिक आयाम है, पर मुझे जो सबसे अधिक मूल्यवान हाथ लगा, वह है इसमें व्याप्त एक काव्य चेतना, एक गहन अनुभूति, दर्शकों को मैं यही अनुभव देना चाह रहा था। 'करफ्यू' बाहर लगा है, ऐसा क्यों कहते हो ? किसी ने हम पर 'करफ्यू' लगा दिया है, ऐसा क्यों मानते हो ? देखो न, करफ्यू लगा है हमारे भीतर। हमीं ने लगा रखे हैं। संबंध और है क्या ?

स्त्री-पुरुष के अनेक मुख—अनेक भावों, मुद्राओं और स्थितियों के—जिनसे लगता है कि ये मुख, ये चेहरे कुछ कहना चाह रहे हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। सम्प्रेषण नहीं हो पा रहा है। कहीं कोई अदृश्य करफ्यू लगा है। कहीं कोई रोक है, दीवार या चौहद्दी है, जिसे इस तरह न तो तोड़ना ही संभव हो पा रहा है, न फेंकना, न ही अस्वीकार कर देना।

एक निर्देशक के रूप में मैं बड़ी गहराई और प्रभावपूर्ण ढंग से यह बता देना चाहता था कि 'करफ्यू' क्या है, इसका अर्थ क्या है, इसका प्रभाव क्या है। करफ्यू वह नहीं है केवल, जो व्यवस्था द्वारा, कानून और आज्ञा से किसी शहर पर, कहीं भी, किसी समय शांति और सुरक्षा के लिए बाहर से लगा दिया जाता है। 'करफ्यू' दरअसल वह है जो स्वतः अपने आप पर लगा लिया जाता है। यह लगाया जाता है अपने समझ-बोध पर, अपने उस दृष्टिकोण पर जहां से, बल्कि जिस चश्मे से हम दूसरों को, इस आसपास के जगत, उसके यथार्थ को देखते हैं। एक 'स्लाइड' द्वारा मैं एक पुल दिखाता हूं। पुल के एक ओर एक स्त्री खड़ी है, दूसरी ओर पुरुष, दोनों एक दूसरे से कुछ कहना चाहते हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। ऐसा कहीं कुछ अदृश्य, अजाना है, जो उनके सम्प्रेषण को नहीं होने दे रहा है—यही है 'करफ्यू'। चारों ओर भीड़ है, उस भीड़ में एक मुख किसी को ढूंढ रहा है, कुछ कहना है उसे, पर संभव नहीं हो पा रहा है। वह अकेला पड़ गया है उस मानसिक बौद्धिक करफ्यू के कारण जो चारों तरफ अदृश्य रूप से फैला है।

इसके लिए मैंने जाल का ही पूरा मंच और करफ्यू का पूरा दृश्य विधान तैयार किया। जाल का ही बना हुआ कमरा है—जहां हम अपनी बैठक, सोने के कमरे में स्वतः अनजाने कैद हैं। यह जाल हमीं ने अपने हाथों अपने चारों तरफ बुना है। यह सच है कि जीवन

स्त्री-पुरुष के अनेक मुख—अनेक भावों, मुद्राओं और स्थितियों के—जिनसे लगता है कि ये मुख, ये चेहरे कुछ कहना चाह रहे हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। सम्प्रेषण नहीं हो पा रहा है। कहीं कोई अदृश्य करफ्यू लगा है। कहीं कोई रोक है, दीवार या कोठरी है, जिसे हम तरह न तो तोड़ना ही सम्भव हो पा रहा है, न बेधना, न ही आरपार कर देना।

एक निर्देशक के रूप में मैं बड़ी गहराई और प्रभावपूर्ण ढंग से यह बता देना चाहता था कि 'करफ्यू' क्या है, इसका अर्थ क्या है, इसका प्रभाव क्या है। करफ्यू वह नहीं है केवल, जो व्यवस्था द्वारा, कानून और आज्ञा से किसी शहर पर, कहीं भी, किसी समय शांति और सुरक्षा के लिए बाहर से लगा दिया जाता है। 'करफ्यू' दरअसल वह है जो स्वतः अपने आप पर लगा लिया जाता है। यह लगाया जाता है अपने संबंध-बोध पर, अपने उस दृष्टिकोण पर जहां से, बल्कि जिस चश्मे से हम दूसरों को, इस आसपास के जगत, उसके यथार्थ को देखते हैं। एक 'स्लाइड' द्वारा मैं एक पुल दिखाता हूं। पुल के एक ओर एक स्त्री खड़ी है, दूसरी ओर पुरुष, दोनों एक दूसरे से कुछ कहना चाहते हैं, पर कह नहीं पा रहे हैं। ऐसा कहीं कुछ अदृश्य, अजाना है, जो उनके सम्प्रेषण को नहीं होने दे रहा है—यही है 'करफ्यू'। चारों ओर भीड़ है, उस भीड़ में एक मुख किसी को ढूंढ रहा है, कुछ कहना है उसे, पर सम्भव नहीं हो पा रहा है। वह अकेला पड़ गया है उस मानसिक बौद्धिक करफ्यू के कारण जो चारों तरफ अदृश्य रूप से फैला है।

इसके लिए मैंने जाल का ही पूरा मंच और करफ्यू का पूरा दृश्य विधान तैयार किया। जाल का ही बना हुआ कमरा है—जहां हम अपनी बैठक, सोने के कमरे में स्वतः अनजाने कैद हैं। यह जाल हमीं ने अपने हाथों अपने चारों तरफ बुना है। यह सच है कि जीवन

में कभी ऐसी घड़ी आती है, जब हम इस घेरे को तोड़ देना चाहते हैं— पर हम केवल व्यक्ति स्तर पर ऐसा करना चाहते हैं, जो असंभव है। यह संभव है केवल सामाजिक स्तर पर, जिसमें वे तमाम लोग सहभागी हों, जिनसे यह करफ्यू लगा समाज बना है, वे सब इस कार्य में शामिल हों। क्योंकि सब फंसे हैं उस जाल में। वह जाल अनेक स्तरों का है—वह सूक्ष्म भी है और स्थूल भी।

'करफ्यू' नाटक समाप्त होता है इस बिन्दु पर कि करफ्यू फिलहाल टूट गया है, पर हम उससे बाहर नहीं हैं। इसीके लिए नाटक का अंत उस पूजा भाव से है कि फिर ऐसा न हो। पर मैं दर्शकों को एक जबरदस्त धक्का देना चाहता था कि देखो तुम इससे मुक्त नहीं। तुम उसी घेरे में बंदी हो। जब तक तुम अकेले-अकेले इसे तोड़ने के लिए प्रयत्न करोगे, यह असंभव है। सब मिलकर ही इसे तोड़ सकते हैं। अलग होना ही तो है करफ्यू लगाना, मिल जाना, व्यक्ति से सामाजिक हो जाना ही तो है करफ्यू का स्वतः टूट जाना, टूट जाना।

मैंने 'करफ्यू' नाटक को आधुनिक भारतीय रंगमंच और नाट्य लेखन की एक महत्त्वपूर्ण रचना पाया है। बहुत गहरी, बहुत मानवीय है इसकी जीवन सामग्री, इसका विषय। इसके रंग-विन्यास, चरित्र और संवाद में अर्थपूर्ण काव्य तत्त्व है। 'करफ्यू' का एक सांस्कृतिक, राजनीतिक आयाम है, पर मुझे जो सबसे अधिक मूल्यवान हाथ लगा, [illegible] में व्याप्त एक काव्य चेतना, एक गहन अनुभूति, दर्शकों को [illegible] देना चाह रहा था। 'करफ्यू' बाहर लगा है, ऐसा क्यों [illegible]? किसी ने हम पर 'करफ्यू' लगा दिया है, ऐसा क्यों मानते [illegible]न, [illegible] लगा है हमारे भीतर। हमीं ने लगा रखे हैं।

बचपन से 'कविता' के पहलुओं ने इतना लगाव की ओर के कई लिखकर भारी कि इनका अब मतलब से नहीं अन्तर। और इनमें म दूर नहीं। बचपन से, मुश्किल का अभाव और भी अनेक चीज़ों और दिशाओं से हुत तक आ रहे हैं।

नाटक लिखना मेरे लिए कविता से स्वाभाविक होता है। वरना नहीं होता। परन्तु मैंने इनका अब फिर से लिखा है —केवल मन।

राम भाई का गुजराती मंचन, और उनके कविता नाटक की कविता की भूमिका मेरे लिए इस कारण बहुत महत्त्वपूर्ण है कि मैंने यह अनुभव किया कि नाटक एक अभिनेता का माध्यम है—जैसे कि दृश्य निर्देशक का माध्यम। इससे मैंने यह चाहा कि नाटक में अभिनेता को ही जैसे अपने नाटक की भाषा, संवाद और कार्य कर दिया जाए। अभिनेता स्वयं मेरा वाहक, माध्यम हो जाए और मैं स्वयं अभिनेता का वाहक, माध्यम हो जाऊँ।

—नाग

[राम निवास, उन्नीस सौ छिहत्तर
नई दिल्ली]

'करफ्यू' के बारे में लेखक की निजी डायरी से

हमारे समसामयिक समाज में मनुष्य के आपसी संबंध कुछ अजीब सीमाओं के भीतर ही जन्म लेते हैं और उसी सीमा में रहकर खत्म हो जाते हैं। इस दुर्भाग्य का सबसे कष्टपूर्ण उदाहरण हमारा दाम्पत्य जीवन है। पति-पत्नी, चाहे वे प्रेम-विवाह के फलस्वरूप मिले हों, चाहे परम्परागत विवाह से, एक-दूसरे को थोड़ा-सा जानकर उसी के भीतर बल्कि उसी थोड़ी-सी पहचान का करफ्यू लगाकर जीवन जीने लगते हैं। पति-पत्नी के व्यक्तित्व में और भी कितने अदृश्य, अनदेखे, बिना पहचाने, बिना ढूंढे, बिना तलाश किए हुए पक्ष 'डाइमेंशन्स' रह जाते हैं और हमारा दाम्पत्य जीवन कृत्रिमता, दिखावेपन, ढोंग का शिकार बनकर रह जाता है। पति-पत्नी अपने उस अनदेखे, अनतलाशे, व्यक्तित्व को अपने परिवार में, अपने आपसी संबंध में जब नहीं जी पाते तो वे जब भी कहीं उचित, अनुचित अवसर या स्थिति पाते हैं तो सहसा उसे (अप्रकट व्यक्तित्व को) प्रकटकर आश्चर्य-चकित हो जाते हैं और यहीं से एक नये जीवन का उद्घाटन सहसा हो जाता है।

इस नाटक का बाहरी परिवेश है एक ऐसा शहर, जहां पर कोई 'रॉयट' हो चुका है और पूरे शहर पर करफ्यू लगा दिया गया है। यह 'रॉयट' और करफ्यू एक तरह से हमारे जीवन के भीतर रॉयट और करफ्यू का ही प्रतिफलन, बल्कि उसी का 'प्रोजेक्शन' है, 'एक्सटेंशन' है। हम यों भी कह सकते हैं कि चूंकि हमारा व्यक्तिगत जीवन

बचपन के 'कर्फ़्यू' के दृश्यों के एक ... की ओर से यह निवेदन करती कि इसका अंत ... से नहीं ... । और इसे ... नहीं । ..., ... का ... और भी ... होते और दिखाते ये युग तक आ रहे हैं ।

नाटक लिखना मेरे लिए अनेक ने स्वाभाविक होता है । यह नहीं होता । अतः मैंने इसका अंत किस से किया है — केवल अंत ।

यह भी ... का दूसरा ही उद्देश्य, और उससे अधिक नाटक की कविता को भूमिका के लिए इस कारण बहुत महत्वपूर्ण है कि मैंने यह अनुभव किया कि नाटक मूलतः अभिनेता का माध्यम है — और कि निर्देशक का माध्यम । इसका मैंने यह पाया कि नाटक में अभिनेता को ही केंद्र मानें नाटक की सत्ता, ... और ... कर दिया जाए । अभिनेता एक ऐसा वाहक, माध्यम हो जाए, और वे सब अभिनेता का वाहक, माध्यम हो जाएं ।

—नाग

[राम निवास, उज्जैन की ...
नई दिल्ली]

इसके बाद नाटक में तीसरे और चौथे ये दृश्य आते हैं और ये
दोनों दृश्य विभिन्न धरातलों पर व्यक्ति पर लगे कर्फ्यू के टूटने
के दृश्य हैं। पाँचवें दृश्य में जब कविता अपने घर लौटती है औ
उस सूने घर में अपने पति को देखती है तो उसे आज उस पूरे घ
का एक नया अर्थ मिलने लगा है। कविता एक नये जीवन के अनुभव
से होकर गुजरी है और वह अब शायद वह कविता नहीं है,
जो इस घर में कितने वर्षों से रहती आई है। पर गौतम भी अ
वह नहीं जो पहले केवल पति के रूप में इस घर में रहता आया है
उसने भी पहली बार एक नया जीवन-अनुभव पाया है और सा
ही अपने से उसका साक्षात्कार भी हुआ है। अर्थात् दोनों की तलाश
ने दोनों को एक नये जीवन-बिन्दु पर पहुँचाया है।

इस तलाश के बाद जब उसकी भेंट रात के पिछले पहर में
अपनी पत्नी कविता से होती है तो वह फिर उन्हीं झूठों का सहारा
लेकर अपने-आपको छिपाने की कोशिश करता है, जैसे कि व
पहले पत्नी के सामने करता रहा था। लेकिन इस बीच कवित
एक नयी स्त्री के रूप में उसके सामने आई है, जिसका अंदाज़ य
परिचय पति को पहले नहीं है। यह नया साक्षात्कार स्वभावतः
थोड़ी देर के लिए गौतम बर्दाश्त नहीं कर पाता। तब क्षण-भ
के लिए कविता उसी झूठ का सहारा लेने लगती है, जिसका सहार
अक्सर आज की ब्याही हुई स्त्रियाँ अपने जीवन में लेती हैं। व
मजबूरन एक काल्पनिक अनुभव बताने लगती है, लेकिन नाटकी
परिणति के अनुसार उसकी वह कल्पना, वही घटा हुआ यथा
सिद्ध होने लगता है जो उस घर में गौतम और मनीषा के बी
कविता की अनुपस्थिति में घट चुका है। दोनों चुपचाप वहीं यह
मन में एक-दूसरे को पहली बार पा लेते हैं और यह पाना स

इस नाटक का पहला प्रस्तुतीकरण दिल्ली की संस्था 'अभियान' ने किया और इसका निर्देशन तथा प्रस्तुतीकरण योजना श्री टी० पी० जैन ने की। सौभाग्य से इस नाटक के चरित्रों का अभिनय अशोक सरीन (गौतम), कविता नागपाल (मनीषा), सुधा चोपड़ा (कविता) और श्याम अरोड़ा (संजय) ने किया। ये चारों अभिनेता दिल्ली के महत्त्वपूर्ण अभिनेता हैं और इसके निर्देशक श्री टी० पी० जैन को मैं नाटक का एक गम्भीर पाठक और व्याख्याकार मानता हूं। नाट्य-पाठ के दौरान टी० पी० जैन से इस नाटक को लेकर मेरी बहुत सारी बातें हुईं और हम दोनों ने मिलकर एक तरह से इस नाटक के मर्म को पाने की चेष्टा की। चरित्रों पर लगे करफ्यू अवश्य छूटने चाहिए, यह सत्य मैंने टी० पी० के साथ अनुभव किया। मैंने किसी तरह से रिचुअल मंत्रों और लोकगीत के सहारे इस सत्य को मंच पर प्रस्तुत करने के लिए कार्य किया। इसके लिए मैं टी० पी० जैन के साथ उन चारों अभिनेताओं का कृतज्ञ हूं जिन्होंने शुद्ध रंगमंचीय मुहावरे में इसे मंच पर प्रस्तुत कर इस नाटक में ध्वनित जीवन को एक अर्थ दिया और इसे साकार बनाया।

इस नाटक की मंच-कल्पना टी०पी० के साथ 'थाइकेल्स' के प्रकाश निर्देशक श्री एस० मुकर्जी ने की थी। मंच की सारी तस्वीर अर्थात् मंच पर एक कल्पनापूर्ण पर यथार्थ पिंजरा बनाया गया था और उस पिंजरे के भीतर ही इस नाटक के पांचों दृश्य प्रस्तुत किए गए थे। दो दृश्यों तक यह पिंजरा बड़ा ही क्रूर और आतंकप्रद लगता था लेकिन तीसरे दृश्य से वह पिंजरा धीरे-धीरे पारदर्शी और कोमल होने लगा था और अन्त में जहां से मोमबत्तियां जलनी शुरू होती हैं वहां से पिंजरा सर्वथा अदृश्य हो जाता है।

और सारे चरित्र जैसे स्वतन्त्र होकर पहली बार अपने अस्तित्व को प्राप्त कर लेते हैं। यह रंगरा उसी करफ्यू का प्रतीक था।

टी०पी० जैन ने अभिनय से लेकर निर्देशन और व्याख्या तक बहुत सारे अस्पष्ट तत्वों को मंच पर प्रत्यक्ष किया था, जिसके लिए मैं उन्हें सदा बधाई दूंगा। और भविष्य में उन सारे अभिनेताओं और निर्देशकों के प्रति कृतज्ञ रहूंगा जो अपने निजी स्तर से इसकी स्वतन्त्र और मौलिक व्याख्याएं करेंगे।

इस नाटक के बारे में मैंने जो कुछ लिखा है वह केवल मेरी निजी डायरी के कुछ 'नोट्स' हैं जिन्हें मैंने अपने लिए लिख छोड़ा था लेकिन आज जब यह नाटक आप सबके हाथों सौंप रहा हूं तो मुझे लगा, मेरे अपने निजी नोट्स अब जैसे मेरे लिए नहीं हैं।

मनीषा का चरित्र इस नाटक की वह रक्त-रेखा है, जिसने मुझे बहुत ही आतंकित किया है। इसने इस नाटक के बारे में जितने मानवीय-अमानवीय अनुभव किए हैं और यह जिस जीवन-अनुभव की प्रक्रिया से गुजरी है वह मेरे लिए बड़ा ही सार्थक बिन्दु रहा है। जैसे मनीषा ने ही मुझे यह अनुभव दिया कि हमारा सारा शहर हमारे करफ्यू लगे हुए घरों का जड़ विस्तार है। गौतम-मनीष, संजय-गौतम और परस्पर सभी अपने अनुभव से निकलकर जितने महत्वपूर्ण और सामर्थ्यवान होते हैं, वही इस नाटक की वास्तविकता है। और यही मेरा अस्तित्व है।

टी० पी० जैन को

'करफ़्यू' का पहला प्रस्तुतीकरण
'अभियान' द्वारा आइफ़ेक्स के मंच पर
नयी दिल्ली में
१२ नवम्बर १९७१ को हुआ।

भूमिका में

मनोहर : कविता नागपाल
गौतम : अशोक सरीन
संजय : श्याम अरोड़ा
कविता : सुधा चोपड़ा

निर्देशन

श्री टी॰पी॰ जैन

मंच और प्रकाश
एम॰ मुकर्जी

पहला दृश्य

बाहर से तेज़ी से मनीषा आती है, मानो कोई उसका पीछा कर रहा हो। कमरे में आकर एक क्षण को ठिठकती है। फिर कमरे-भर में नज़र दौड़ाती है। ट्रे में से एक फल उठाकर दांत से काट-काटकर खाने लगती है। एक मैगज़ीन उठाकर देखती है और आराम से सोफ़े पर बैठ जाती है। कुछ क्षणों बाद टेलीफ़ोन की घंटी बजती है। भीतर से गौतम आकर'''

गौतम : हैलो।'''गौतम। हां, फ़ैक्ट्री बन्द कर दीजिए। और क्या ?'''हूं'''बिल्कुल किसे मालूम था, आज फिर अचानक इस तरह'''हां, हां, कोई बात हो तो मुझे फ़ोन कीजिए।

मनीषा : (उसकी ओर देखती रहती है। गौतम अन्दर जाने को मुड़ता है, तभी उसकी नज़र मनीषा पर पड़ती है।)

गौतम : आप'''

मनीषा : (फल खाती रहती है।)

गौतम : (क्या करे)

गौतम : आप'''(कुछ बोलना चाहता है।)

मनीषा मैगज़ीन देखती हुई

मनीषा : हैलो'''

गौतम : (घूरता रहता है।)

मनीषा : पहचाना नहीं ? एक बार मुलाकात हुई थी आपसे, करी
दो साल पहले।

गौतम : जी ?

मनीषा : विज्ञापन के लिए। गूंगे-बहरों के लिए वह 'चैरि
शो।'

गौतम : (याद करने की कोशिश करता हुआ) दो सा
पहले...

मनीषा : आपने बड़े गुस्से में...

गौतम : याद नहीं पड़ता।

मनीषा : कोई बात नहीं। फल बड़ा मीठा है।

गौतम : आप...

मनीषा : जी आप...

गौतम : आज कैसे ?

मनीषा : आप ये तस्वीरें देखते हैं ? (उठकर दिखाती है।)
तस्वीरें।

गौतम : तशरीफ रखिए।

मनीषा : क्या ?

गौतम : तशरीफ।

गौतम : बैठिए।

मनीषा : बैठ जाऊं या...

हंसती है।

विराम

मनीषा : अच्छा है, अभी दफ्तर से आए हैं !

गौतम : (चुप है।)

मनीषा : हम बोलते हैं !

गौतम : (चुप)

मनीषा : टाई उतार दीजिए ना।

बढ़कर सामने से टाई खींच लेती है।

मनीषा : कहाँ थी है ? सारा पानी पानी है।

गौतम : आप…। मनीष…

मनीषा : बैठिए। ना, ना, तशरीफ रखिए।

गौतम गम्भीरता से अन्दर चला जाता है।

मनीषा : सुनिए, थोड़ा-सा पानी।

आँखों को डुबडबाकर देखती जा रही है।

मनीषा : अन्दर आ जाऊँ पानी पीने ?

गौतम : (लेकर आता है और मेज पर रख दिया है) पीजिए।

मनीषा : (पीती है।) ज्यादा…झूठा है।

गौतम : (चुप है।)

मनीषा : ये 'बड़ प्यास' ? बड़े नाट साहब हैं।

गौतम : आपको बात करनी …पानी ?

मनीषा : आपको जल्दी है ?

विराम

गौतम : घर जा रही थीं न ?

मनीषा : घर ?

गौतम : फोन कर दीजिए।

मनीषा : 'होम, स्वीट होम'।

गौतम : क्या दीजिए आप यहाँ

मनीषा : आप अन्दर क्या कर रहे थे ?…अच्छा ? अकेले का

बोली के [illegible]।

कौशल — कौन?

मनीषा — [illegible] ...[illegible] है [illegible]?

कौशल — किसलिए...

मनीषा — नहीं है?

कौशल — ऐसे कह नहीं [illegible]...

मनीषा — [illegible] हूँगा।

कौशल — आप [illegible] की करती है?

मनीषा — [illegible] को बचाने के लिए।

कौशल — और [illegible] करती है?

मनीषा — [illegible]। [illegible]

विराम

मनीषा — अब [illegible] करते हैं?

कौशल — मैं [illegible]...

मनीषा — [illegible] हैं...

कौशल — [illegible]...?

मनीषा — उनके [illegible]? [illegible]...कीजिए [illegible] [illegible]
कीजिए।

विराम

मनीषा : क्या खिलाएंगे ?
गौतम : जो···
मनीषा : कुछ भी···
गौतम : (मुस्कराता है।)
मनीषा : आपके मुस्कराने में भी कायदा-कानून ?
गौतम : जरूरी है।
मनीषा : किसलिए ? जिस चीज के लिए वह जरूरी है, वह क्या है ? (सहसा) ओहो, कमीज का यह बटन खोल लीजिए ना।

कालर का बटन खोल देता है।

गौतम : आप कहां रहती हैं ?
मनीषा : आपकी 'पत्नी' कहां है ?
गौतम : अन्दर···भीतर···
मनीषा : पर्दे में रहती है ?
गौतम : नहीं, वो तबीयत ठीक नहीं।
मनीषा : इस घर में किसकी तबीयत ठीक रह सकती है !
गौतम : क्यों ? मुझे देखिए !
मनीषा : देख रही हूं।'···टैक्सटाइल' की स्टाम्प लगा जुलाहा।

विराम

गौतम : आपका शुभ नाम ?
मनीषा : शुभ नाम···

मनीषा हंसती है।

गौतम : इसमें हंसने की क्या बात ?
मनीषा : शुभ नाम···। नाम में शुभ क्या होता है ?
गौतम : परिचय का तरीका है।

मनीषा : परिचय ? नामों का परिचय ?

गौतम : पहला परिचय नाम से ही होता है।

मनीषा : किसने कहा ?

गौतम : माना जाता है।

मनीषा : माना नहीं, लादा जाता है। जैसे पत्नी कहने से बहुत कुछ ऐसा लाद दिया जाता है…

अभिनय करती है।

गौतम : बन्द कीजिए अपनी…

मनीषा : बन्द तो है ही।…सब कुछ, परिचय, मिलन, प्रेम,…

गौतम अन्दर जाता है। इस बीच वह टेप रिकार्ड चला देती है।

मनीषा : यह बजता है।

आवाज़ बढ़ा देती है

गौतम : (अन्दर से प्लेट में कुछ लेकर आता है। हड़बड़ाहट से) क्या करती हैं आप ?

मनीषा : क्यों ?

गौतम : वह जाग जाएगी तो—उनकी तबीयत ठीक नहीं और फिर संगीत (आवाज़ घटाता हुआ) इस वाल्यूम पर अच्छा लगता है।

मनीषा : कहाँ लिखा है ?

गौतम : खाइए…मतलब मुँह बन्द कीजिए।

मनीषा : आपके नौकर-चाकर…आया, महाराज, ड्राइवर वगैरह ?

गौतम : कुछ छुट्टी पर हैं, और कुछ…

मनीषा : और इनकी तबीयत खराब है। इसलिए आप स्वयं…

गौतम : इस तरफ नहीं, इधर मक्खन लगाया जाता है।
मनीषा : और इधर लगाने से क्या हो जाता है?
गौतम : फायदा है'''

विराम

मनीषा : आप भी लीजिए।
गौतम : इस समय कुछ नहीं खाता।
मनीषा : आज खाकर देखिए।
गौतम : नहीं, थैंक्यू!

मनीषा जबरन गौतम के मुंह में टोस्ट लगा देती है।

मनीषा : घूरिए नहीं। चभर-चभर खाइए। कुछ आवाज तो हो।
गौतम : टेलीफोन कर लीजिए।
मनीषा : कहां?'''
गौतम : अपने घर।
मनीषा : घर माने?
गौतम : घर।
मनीषा : ध से घर।
गौतम : कहां रहती हैं?
मनीषा : उनको पता है—मैं यहां हूं?
गौतम : सो रही हैं।
मनीषा : वह आप पर शक करती हैं?
गौतम : माने?
मनीषा : आप उनपर शक करते हैं?
गौतम : यह एक शरीफ आदमी का घर है।

मनीषा जुंगी दूसरे ढंग से बांधती है।

मनीषा : मेरी टांग कैसी है? कहिए न! कहिए लाजवाब! संग-मरमर की प्रतिमा…खजुराहो की नर्तकी!

विराम

मनीषा : क्या देख रहे हैं?…क्या सोच रहे हैं? यह लौंडिया कितनी चालू है, साली को…

गौतम : आप मुझे नहीं जानती?

मनीषा : आप तो मुझे जान गए हैं? क्या इम्प्रेशन है मेरे बारे में?

गौतम : आप…

मनीषा : सुन्दर है, विचित्र है, औरों की तरह नहीं है। सब यहीं से शुरू करते हैं, फिर तरह-तरह की बातें बनाने हैं। कोई राजनीति की, कोई आर्ट की, कोई औरतों की आज़ादी की। सारे बदमाश, अपने-अपने बुने हुए जाल फेंकते हैं सब…

गौतम : लेकिन आप बच निकलती हैं।

मनीषा : हां, अक्सर।

गौतम : ग़लतफ़हमी है।

मनीषा : आपको है मेरे बारे में—दूसरों की तरह, सब मुझे पहले से ही जानते हैं।

कहती हुई तलवार उठा लेती है।

गौतम : यह मुझे स्पेन में मिली थी।

मनीषा : इसमें तो जैसे जंग लग गई है। आपके लिए हर चीज़ क्या केवल सजावट है—बीबी से लेकर तलवार तक?

नंगी तलवार की धार पर जैसे सितार

'अभियान' द्वारा प्रस्तुत
'करफ्यू' के कुछ दृश्य

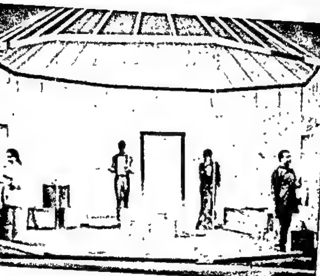

मंच का दृश्य

गौतम : कायर, बुज़दिल !
मनीषा : सारे कानून-कायदे को तोड़ दो !'

संजय मेरे साथ नाटक
कविता नहीं नहीं ' नहीं

हेमेन्द्र भाटिया (गौतम) और श्यामली मित्तर (मनीषा)

'दर्पण' द्वारा प्रस्तुत : दो दृश्य

बायें से दायें—श्यामली मित्तर (मनीषा) कमल दत्ता (कविता), हेमेन्द्र भाटिया (गौतम) तथा राकेश वर्मा (सजय)

कुछ है जिसका अभाव लगता है हर समय।

मनीषा : क्या है वह?

गौतम : क्या? यही तो नहीं मालूम, हां, मगर सोचना अच्छा लगता है।

मनीषा : मुझे घूमना अच्छा लगता है।

गौतम : डर नहीं लगता?

मनीषा : डर, क्यों?

गौतम : इस तरह अकेले?

मनीषा : मुझे विश्वास है।

गौतम : दुनिया पर?

मनीषा : अपने पर।

गौतम : (चुप)

विराम

मनीषा : आपकी 'वो' क्या करती है?

गौतम : घर में रहती है।

मनीषा : कहां तक पढ़ी है?

गौतम : एम० ए०, इतिहास।

मनीषा : और सारा दिन घर में रहती है?...तभी तो बीमार है।

गौतम : कुछ पीजिएगा?

मनीषा : पीते हैं...उई...उई...उई...

गौतम : डाक्टर ने कहा है, कभी-कभार शाम को थोड़ा...

मनीषा : डाक्टर ने कहा है (हंसती है।) खुद नहीं...

गौतम अंदर जाता है।

मनीषा : क्यों इतना डरता है आदमी ... से? क्यों हर समय उसे ... ...ती है अपने

: जो शादी के लिए आ गिरे, जिनके मैं मजबूर मकान है? क्यों नहीं वो अपना 'इक्विलिब्रियम' खोकर बाहर आ जाता है? आखिर क्या हमारी सहेलियाँ मानसिक दरवाजा नहीं?

इसी बीच बोतल से गौतम ड्रिंक लिए आता है। मनीषा विचारमग्न होने के कारण उसे देख नहीं पाती।

गौतम : लीजिए।
मनीषा : नो, थैंक्स नाट मी।
गौतम : 'व्हाई, यू डोंट ड्रिंक?'
मनीषा : लेती हूँ लेकिन आपके साथ पीने का मतलब है, आपकी नज़रों से गिर जाना।
गौतम : 'आई एम ए मैरिड मैन।'
मनीषा : (ठहाका मारती है।)
गौतम : धीरे हँसिए...
मनीषा : हँसी से भी डर?
गौतम : आदत नहीं। पसंद भी नहीं।
मनीषा : आपकी...वो बिल्कुल नहीं हँसती होंगी
गौतम : आप उन्हें नहीं जानतीं, मैं जानता हूँ।
मनीषा : कितना?
गौतम : कितना?
मनीषा : नो, थैंक्स।
गौतम : प्लीज़।
मनीषा : 'वो' पीती हैं?
गौतम : नहीं...यह लीजिए।

मनीषा : मुझे किसी डाक्टर ने नहीं कहा।

हंसती है।

गौतम : सिर्फ साथ देने के लिए।

मनीषा : आप तो अकेले पीते हैं।

गौतम : लेकिन आज नहीं...अच्छा चियर्स।

मनीषा : चियर्स।

गौतम : सोचने से मुझे हाइपरटेंशन हो जाता है, तभी डाक्टर ने...

मनीषा : आपको संगीत में...?

गौतम : हां, दिलचस्पी है...कभी गाता भी था।

मनीषा : रियली...?

गौतम : (आवेग में) मैं हर वक्त झूठ बोलता हूं क्या?

मनीषा : हंसती है।

गौतम : आप इतना हंसती क्यों हैं?

मनीषा : अच्छा, एक गाना सुना दीजिए।

विराम

मनीषा : सुनाइए न गाना।

गौतम : अब नहीं गाता।

मनीषा : क्यों?

गौतम : आदत नहीं रही।

विराम

मनीषा : वाह! क्या खूब!" आप किस तरह गाते-गाते उठ गए। किस तरह टहल-टहलकर...गाते समय आपका चेहरा बिल्कुल बदल गया था। लगा, आपके भीतर से...कहीं...एक बिल्कुल दूसरा...

[illegible] है [illegible] ज़िन्दगी में [illegible] कुछ नहीं रहा। [illegible]
[illegible] [illegible] के बाहर [illegible] भी [illegible] है [illegible]
[illegible] नहीं [illegible] ।
[illegible]
[illegible] ।
[illegible] ...
: [illegible] कुछ नहीं [illegible] । [illegible] [illegible] जाती
के [illegible] कुछ ...[illegible] ...हूं [illegible] । [illegible]
[illegible] नहीं [illegible] नहीं [illegible] है (बहुत
[illegible] कुछ) [illegible] नहीं [illegible]
[illegible] के बाद [illegible] कुछ...
[illegible]... ।

कौन हो तुम

हैलो...हां, [illegible]...यह मैं ही हूं। कोई नहीं [illegible]
[illegible] है...[illegible]...हूं...को हो...हूं...हूं...

फोन रख देता है।

: बहुत ही जल्दी आराम हुई है—अब [illegible] है...लेकिन
[illegible] है।
[illegible] कम होने से समझ तो सकता ही है।
आपकी उपस्थिति कितनी रहती है!
: तो आप यहां से मुक्त करते हैं?
: (चुप)
[illegible] मन से कहा ध्यान...(जकड़ करती है) अ
अ...आ...आ आ आ...अ आ...आ आ...आ आ
आ आ आ...[illegible]...नी...मु...न...मुरत...है।

गौतम : (चुपचाप पी रहा है।)

मनीषा : अरे…आप इस तरह क्यों पीते हैं? इत्मीनान से पीजिये।

गौतम : मैं सोचता हूं…

मनीषा : आप इतना डरते क्यों हैं?

गौतम : निडर होने के लिए।

मनीषा : हो जाइए ना।

गौतम : कैसे?

मनीषा : आपको कभी अपने-आप पे गुस्सा नहीं आता?

गौतम : (चुप)

मनीषा : नफरत नहीं होती?

गौतम : (पीता है।)

मनीषा : कि आप आदमी नहीं चूहे हैं।

गौतम : (सहसा) शहर में जो कुछ हो रहा है वह क्यों? एक दबी हुई बात, जो सहसा फूट पड़ी है किसी एक बहाने से।

मनीषा : हर कायर आदमी को एक सहारा चाहिए। बहाना चाहिए, इसके पहले कि वो चूहे से शेर बन सके।

गौतम : यही सब, वह लोग कर रहे हैं जो निर्दोष बूढ़ों, बच्चों और औरतों को तंग कर रहे हैं, बसों का निशाना बना रहे हैं, क्रान्ति का बहाना लेकर दंगे-फसाद करते हैं। शान्ति भंग करते हैं, नियम तोड़ते हैं, जीवन की गति-लय को…

मनीषा : रहने…नहीं देते। उस गति, उस लय को, जिसकी हमें आदत हो गई है, विलम्बित लय…

पीती है।

गौतम गिलास खाली करता है।

मनीषा : कम से कम आपके पीने की लय तो द्रुत है।

गौतम : (अपने गिलास में डालते हुए) आप बहुत स्लो हैं।

मनीषा : वैसे जो फास्ट हूं।

विराम

गौतम : आपको लुंगी बहुत अच्छी लगती है।

मनीषा : (हंसती है) आप सीधे क्यों नहीं कहते? मेरी उंगली, मेरी लुंगी, मेरा पैर…। कहीं कुछ तो कबूल कीजिए।

गौतम : (चुप है।)

मनीषा : हिम्मत नहीं। मुझमें भी न थी—बिल्कुल नहीं। तब मेरे पापा 'वाइस चान्सलर' थे। मैं यही सोलह साल की थी सीनियर केम्ब्रिज में…। उस लड़के का नाम कमल था। वह न खेलता, न बात करता, बस एकटक मुझे निहारता रहता। एक दिन जब हम पिकनिक पर गए हुए थे तो अकेला पाकर उसने मुझे 'किस' कर लिया। मुझे बुरा नहीं लगा था फिर भी मैंने उसे डांट दिया। प्रिन्सिपल से रिपोर्ट करने की धमकी दी। वह डर गया, गिड़गिड़ाने लगा, लेकिन मैं थी कि यह सब मुझे अच्छा लग रहा था। घर लौटकर उसे तेज बुखार चढ़ आया। बेहोशी में वह मेरा नाम पुकारता, बाद में उसे सेनीटोरियम ले जाया गया…

सन्नाटा

मनीषा : फिर न जाने वह कहां चला गया।

गौतम : थोड़ी और…

मनीषा : (गिलास लेकर) फिर एक और।...टेनिस प्लेयर... कालेज में। उसके साथ मुझे ऐसा लगता—जैसे मेरी ममी, जो मुझे जन्म देकर ही...वह मुझे मिल गई। सच, उसीसे मैंने, मां की कल्पना की थी। अधिकार... विश्वास...सुरक्षा। वह बहुत सावधानी से कार चलाता। उसीने मुझे कार ड्राइविंग सिखाई। मैं कार चलाती। वह मेरे अंक में सिर रख कर...। उसीने कहा था—शक्ति आत्मा की, सुन्दरता भावों की। साहस चरित्र का। धैर्य के सहने का।

सन्नाटा

मनीषा : मैं साथ में ही थी जब वह कार एक्सीडेंट हुआ।

एक सांस में पी जाती है।

गौतम : (चुपचाप पी रहा है।)

मनीषा : ...फिर...एक रिसर्च स्कालर आया। उसने बिल्कुल नई दिशा दी मेरे विचारों को, एक सम्पूर्ण जीवन-दृष्टि। मुझे लगने लगा जैसे आज तक जिस तरह का जीवन हमने जिया है वह अर्थहीन था। हम खोखले सिद्धान्तों और गले-सड़े आदर्शों की बैसाखियों ... पंगु हो चुके हैं। हमारा समाज, ... आत्म-सुरक्षा की दीमक ... गुलाम हो चुके हैं औ... के लिए परिवर्तन आवश्यक ... वह गिरफ्तार कर लिया गया ... में। कुछ दिनों बाद सुना, वह ... निशाना बन गया, क्योंकि उसने

जेल से भागने की कोशिश की थी। तब से मैं बराबर घूमती रही हूं। यहां से वहां, वहां से यहां। बिना कहीं रुके, बिना टिके। कितने लोग एक के बाद एक-एक जीवन में आए, याद नहीं। कोशिश भी नहीं की याद रखने की। एक अपरिचित, फिर दूसरा अपरिचित। एक जाना-पहचाना चेहरा जब उकता देता है तो अनजाना चेहरा पहचाना लगने लगता है। 'नाऊ आई लाइक ओनली स्ट्रेंजर्स। (रुक जाती है। पीती है।) 'एण्ड यू आर ए स्ट्रेंजर एट।'

गौतम : मुझे अपना दोस्त मान लीजिए।

गौतम के हाथ में अपना हाथ दे देती है।

मनीषा : मुझे लगता है, यही ढूंढती रही हूं।

गौतम : मुझपर विश्वास रखो।

मनीषा : (चुप है।)

गौतम : कहो, विश्वास है...इस दोस्ती के लिए...जिउर्न।

मनीषा : यह जो मेरा बाहरी रूप है न..., मतलब...यह जो है...

गौतम : हां...

मनीषा : (चुप)

विराम

गौतम : मेरी जिन्दगी बिल्कुल सपाट है—कभी कुछ नहीं हुआ। इस कदर आराम और फुरसत में जिन्दगी...हां, 'सफरी' में भी, फिर भी आज तक का कोई कुछ नहीं। जैसे खुद अपने-आपसे अपरिचित हूं।

मनीषा : अब बताइए, आपने मुझे जब पहली बार देखा, मेरे

बारे में क्या सोचा ?

गौतम : मेरी आदत है, नेचर भी कह सकती हैं—देखते ही मैं आईडियार बना लेता हूं और उसे बदलता नहीं, जरूरत नहीं महसूस होती।

विराम

मनीषा : मैं यहां कुछ दिन…?

गौतम : शौक से।

मनीषा : आपकी वाइफ…?

गौतम : वह मेरे…खिलाफ नहीं जाती। बड़ी समझदार हैं। और नेक।

मनीषा : यह जान लेने पर भी, कि हम दोनों…?

गौतम : यह जानने की क्या जरूरत ?

मनीषा : जरूरी है।

गौतम : मैं समझता हूं—बिना किसीके जाने…

मनीषा : 'यू विल आलवेज बी ए बिजनेसमैन।'

गौतम की हंसी। मनीषा बढ़कर संगीत चला देती है।

मनीषा : गाना गाओ…ओ मैन।

गौतम : 'वो' जग जाएगी।

संगीत बन्द

मनीषा : अब उन्हें जगना चाहिए। उनसे फौरन मिलना चाहती हूं…मैं जगाती हूं।

गौतम : नहीं…प्लीज।

मनीषा : पर क्यों ?

गौतम : मैं जो चाहता हूं।

मनीषा : मुझे थामे रहो। छोड़ना नहीं। इसी तरह सो जाना चाहती हूं'''रेस्ट'''रेस्ट।

गौतम के हाथ में बिलकुल झूलकर आराम करने लगी है।

गौतम : मनीषा'''

धीरे-धीरे उसपर झुकता है।

मनीषा : (सहसा सावधान हो खड़ी हो जाती है।) तुम्हारी शादी की साल गिरह'''आओ'''ना'''नाचना नहीं आता?

हंसती है।

मनीषा : (नाचने लगती है।) म्यूज़िक चलाओ।

गौतम : सितार पर बालरूम डांस।

मनीषा : कहीं पर कुछ भी।'''आओ, बढ़ो, मेरा हाथ पकड़ो। कदम बढ़ाओ। (पकड़ लेती है) इस तरह'''मजबूती से थामो न। हां'''अब पैर बढ़ाओ'''ऐसे'''ऐसे''' ऐसे'''शाबाश'''

गौतम : थोड़ी और ले लूं

डालता है।

मनीषा : बस'''बस'''क्या कर रहे हो?

बोतल छीन लेती है।

गौतम : थोड़ी-सी और।

मनीषा : सो'''और?'''

गौतम : बस।

मनीषा : चलो अब।

संगीत बन्द कर देती है। गौतम चुपचाप।

मनीषा अकेले नाच रही है—मंत्रमुग्ध।
न जाने किस लोक में खोई हुई। सहसा
गौतम बढ़कर मनीषा को पकड़ लेता है।

मनीषा : क्या देख रहे हो ?
गौतम : कितनी सुन्दर !
मनीषा : क्या ?
गौतम : (पकड़े हुए) तुम।
मनीषा : ओहो। हाथ टूट जाएगा।
गौतम : चाहता हू, यह टूट जाए। पर···
मनीषा : मेरा हाथ ?
गौतम : मेरे भीतर···
मनीषा : चलो मेरी आंख मूंद लो।

गौतम कुर्सी के पीछे से उसकी आँखें
दोनों हाथ से मूंद लेता है।

मनीषा : इस अंधेरे में देख रही हू···वही कमल···वही टेनिस का खिलाड़ी···वही रिसर्च स्कालर···और न जाने कितने चेहरे।

गौतम उसके सिर को चूमता है।

मनीषा : डरते हो ?

गौतम हाथ चूमता है।
विराम

मनीषा : मुझे चाहते हो ?
गौतम : (चुपचाप हाथ चूमता जा रहा है।)
मनीषा : मुझे प्यार करो।
गौतम : अब तक कितने लोगों से ?

मनीषा : सबसे।
गौतम : मतलब…?
मनीषा : शरीर सबय…?
गौतम : हां।
मनीषा : अगर कहूं किसी से नहीं। विश्वास नहीं होता?
गौतम : (सिर हिलाता है।)

विराम

मनीषा : अगर हमेशा तुम्हारे पास रहूं?
गौतम : रह पाओगी?
मनीषा : शादीशुदा क्या दूसरी स्त्री से प्यार नहीं कर सकता!
गौतम : पत्नी से छिपकर।
मनीषा : उसकी जानकारी मे क्यों नहीं?
गौतम : ऐसा नहीं होता।
मनीषा : अपराध है!
गौतम : पता नहीं।

गौतम बढ़कर उसको पकड़ लेता है।

मनीषा : (छुड़ाकर) ऐसे क्यों करते हो!
गौतम : आदत।
मनीषा : तोड़ दो।

विराम

मनीषा तेजी से टेपरिकार्डर चला देती है। ऊंचा संगीत।

मनीषा : ओ हो…हो हो…हो हो।
ओ हो…हो हो…हो हो।

कई क्षणों तक चलता है।

गौतम : (पुकारकर) 'वह' जग जाएगी।

संगीत बंद

मनीषा : जग जाए।

गौतम : तुम्हें पता नहीं?

मनीषा : चाहती हूँ तुम जग जाओ।

गौतम : तुम कुछ नहीं जानतीं।

गौतम ड्रिंक लेने लगता है। मनीषा बढ़कर एक कैंडिल निकालती है। जलाती है। गौतम बढ़कर उसे फूंक मारकर बुझा देता है।

मनीषा : तुम्हारी आज साल-गिरह है।

फिर जलाती है। वह फिर बुझा देता है।

मनीषा : क्या करते हो?

गौतम उसे पकड़ना चाहता है। उसका चेहरा देखकर मनीषा दूर हटने लगती है।

गौतम : डरती हो?

सन्नाटा

मनीषा : 'गुड नाइट।'

गौतम : जा रही हो?

मनीषा : हां।

गौतम : कहां?

मनीषा : पता नहीं।

गौतम : क्यों?

मनीषा : अब तुम अपरिचित नहीं रहे।

गौतम : जाओगी कैसे?

मनीषा : क्यों ?

गौतम : दरवाज़ा बंद है।

मनीषा : खोल लूंगी।

गौतम : अब इतना आसान नहीं।

उसे कसकर पकड़ लेता है।

विराम

मनीषा : जानवर !

संघर्ष

मनीषा : मत पकड़ो इस तरह।

छुड़ाकर अलग खड़ी होती है।

गौतम : क्यों ?

मनीषा : क्यों ?…कायर।

[redacted] दरवाज़े की ओर बढ़ती है।

मनोहर : (भीतर का दरवाज़ा पीटती हुई) आगिए…आगिए …बाहर निकलिए…

गौतम : वह नहीं है।

मनीषा : क्या ?

गौतम : हां, यहां कोई नहीं। केवल मैं और तुम…तुम और मैं…

बढ़ता है।

मनीषा : तुम्हारे भीतर…?

गौतम : डरती हो ?

मनीषा नहीं…नहीं…नहीं।

बाहर भागना चाहती है। गौतम पीछे से पकड़ लेता है। संघर्ष।

मनीषा : कायर···बुजदिल।

गौतम : सारे कानून-कायदे तोड़ दो।

मनीषा . टूटे।

गौतम : कहीं पर कुछ भी···

मनीषा : (अवाक्)

गौतम : मुझे···तूने···

मनीषा . क्या ?

गौतम : इस तरह कमरे में आना···मेरी टाई खींचना, बटन खोलना, गेम-तमाशे, सारी हरकतें···माई लव स्ट्रेन्जर !

मनीषा : (चुप है)

गौतम : मेरा कोई कसूर नहीं। तुम यहां पनाह लेने आई··· फिर एक शरीफ लड़की की तरह···कायदे से।

मनीषा : (मूर्तिवत् निहार रही है।)

गौतम : जानबूझकर मुझे···

मनीषा : तुझे ?

गौतम : मेरा कोई कसूर नहीं।

मनीषा : (तलवार उठा लेती है। गौतम डर जाता है।) अब आगे मत आना, मैं अपने को बचा सकती हूं। विश्वास हुआ ?

तलवार फेंककर निकल जाती है।

गौतम : कहां जाओगी ?

गौतम मूर्तिवत् खड़ा है।

गौतम : यह क्या किया मैंने।···यह क्या हुआ ?

सोफे पर गिरता है। ड्रिंक लेने लगता है। सोफे पर धीरे-धीरे लेट जाता है।

दूसरा दृश्य

संजय का कमरा। संजय कुछ पढ़ रहा है।

: कौन ?···मैं। तुम आ गईं। मैं डरता था, भय था मुझे, कहीं तुम आ न सको ? कैसी बात करते हो ?··· पर यह क्या ? तुम्हारी आंखों में आंसू ? लड़की बहुत देर चुप रह जाती है—युवक कुछ नहीं समझ पा रहा है। लड़की आएगी तो कहां खड़ी होगी ?···युवक यहां बैठा इन्तजार कर रहा होगा। उसे सिगरेट पिलाना ठीक होगा ? नहीं, उसमें धैर्य है, और विश्वास भी। वह लड़की को अन्तर की गहराई से प्यार करता है। लड़की भी उसी तरह प्यार करती है। लड़की ने ही तो उससे कहा है—वह उसे लेकर यहां से चला जाए। और शादी करके लौटे।···ठीक। लड़की यहां आकर खड़ी होगी।·· पर वह आएगी कैसे ? उसका प्रवेश किस तरह का होगा ?

बाहर से सहसा कविता का प्रवेश। उसे देखे बिना संजय पूरी स्थिति पर विचार करता है, और फिर अपना तथा लड़की का संवाद दुहराता है।

: कौन ?

ा : जी मैं।

: (हड़बड़ा कर उठता है) आप ?

ाः : जी क्षमा कीजिए, संजय जी, अचानक कपड़ा लग जाने

के कारण घर वापस न लौट सकी।

संजय : आप मुझे जानती हैं ?

कविता : आप मुझसे परिचित नहीं, लेकिन मैं आपको जानती हूं।

संजय : कैसे ?

कविता : आपको कई बार मंच पर देखा है—अलग-अलग रूपों में—असली रूप में पहली बार देख पा रही हूं।

संजय : आइए, बैठिए, खड़ी क्यों हैं ?

कविता : क्या संयोग है ! इस कर्फ्यू के कारण आपसे भेंट हो गई। चाहा कितनी बार था कि आपसे मिलूं, आपकी प्रशंसा करूं लेकिन हो आज पाया है। और वह भी अकस्मात्। नीचे आपकी नेमप्लेट देखी तो, किसी अजनबी के घर बिना पूछे घुसने का संकोच त्याग, चली आई। आशा है, आप बुरा नहीं मानेंगे।

संजय : नहीं, नहीं, बुरा मानने की बात नहीं है। जितनी देर आप चाहें रुकें। हां, एक बात बता दूं—मैं यहां अकेला हूं, यानी कोई स्त्री नहीं है घर में।

कविता : कैसी बात करते हैं आप! आपपर अविश्वास तो मैं स्वप्न में भी नहीं कर सकती, अपने पर शायद उतना न हो, आपपर है। आपके नाटक देख-देखकर एक आदर-भाव पैदा हो गया है मन में—आप-सा कलाकार—अभिनेता मैंने किसीको नहीं पाया।

संजय : छोड़िए यह तारीफ। लगता है थियेटर की शौकीन हैं आप।

कविता : केवल देखने भर की। स्कूल से कालेज तक करने का

भी शौक रहा—अक्सर ड्रामों में, लेकिन अब केवल देखना-भर ही बच रहा है।

संजय : आराम से बैठिए, मैं तब तक काफी लाता हूं।

कविता : पहले एक फोन करना चाहूंगी—अपने पति को बता दूं, मैं कहां हूं, वरना वह मेरे लिए परेशान होंगे।

संजय : आप फोन कीजिए—मैं काफी लाता हूं।

जाता है।

कविता टेलीफोन करती है। शायद नम्बर नहीं मिलता—दूसरा नम्बर मिलाती है।

कविता : हेलो, मैं मिसेज गौतम बोल रही हूं। घर से नहीं, कहीं और से—एक मित्र के यहां से—जरा घर गौतम साहब को फोन कीजिए और बता दीजिए कि मैं 'सेफ' हूं। फिक्र न करें—मुझे नम्बर नहीं मिल पा रहा। हां, थोड़ी देर बाद फिर करके पूछ लूंगी।

रख देती है।

संजय काफी की ट्रे लेकर आता है।

संजय : मिल गया फोन?

कविता : जी, घर का फोन 'एन्गेज्ड' आ रहा है, शायद खराब है, फैक्ट्री कर दिया है।

संजय : (काफी बनाकर देता हुआ) चीनी कितनी?

कविता : आपने बेकार परेशानी उठाई। मैं तो इस समय काफी नहीं पीती।

संजय : परेशानी कैसी? आपकी बदौलत मुझे भी नसीब हो गई।

कविता : बहुत दिनों से नहीं पी। अब तो यह भी याद नहीं,

आखिरी बार शाम को बाकी बच पी थी—सो आदत नहीं रही।

संजय : आप पीकर देखिए तो ! चीनी ?

कविता : अच्छा, तो फिर मैं बनाती हूं।

संजय : मेरे हाथ की बनी पीकर देखिए। लीजिए।

कविता : वैसे यह काम औरतों का है।

संजय : लगता है, आप हर चीज़ निश्चित करके चलती हैं।

कविता : निश्चित किए बिना चलता जो नहीं। आप भी तो नाटक में हर बात निश्चित करके चलते हैं।

संजय : पीजिए, ठंडी हो रही है।

कविता : जिन्दगी भी तो नाटक है। (सहसा) ऐसा क्यों नहीं नाटक होता, ठीक जैसे हमारी जिन्दगी है। जहां कोई चीज पहले से निश्चित नहीं है। मतलब, हमने तो निश्चित कर रखा है, मगर सहसा, अचानक कुछ ऐसा हो जाता है कि विश्वास नहीं किया जा सकता…जैसे कि आज मेरा यहां आ जाना।

संजय : पीजिए…

कविता : हाय, कितनी उम्दा। क्या डाल दी आपने ? एक चम्मच से ज्यादा कभी नहीं पी थी…विश्वास कीजिए। और आज आपने पूरे ढाई चम्मच।

संजय : बहुत मीठी हो गई !

कविता : ऊंहूं। वाह्…।

संजय : शुक्रिया

कविता : लगता है, आप हरदम अभिनय करते हैं।…आपके बोलने-चालने में एक…एक…मतलब…एक कैसा

होती है।

संजय : आप 'जमावट' कहना चाह रही थीं।

कविता हंसती है।

कविता : जी, बिलकुल।

संजय : तो कहिए ना, कहिए।

कविता : लगता है, आप हर वक्त दूसरों को प्रभावित करना चाहते हैं।

संजय : पहली बार, ऐसा किसीने कहा है।

कविता : क्षमा करें। इस तरह बोलने की मेरी आदत नहीं। लेकिन आज…

संजय : थोड़ी सर्म और लीजिए।

कविता : ना-ना, ना-ना, मैं सिर्फ एक कप।

संजय : अपने चारों ओर जैसे ब्रेक लगा रखी है।

दोनों पी रहे हैं। टेलीफोन की घंटी बजती है।

संजय : हैलो सञ्जय हियर। हैलो दीपक, हां भई, नहीं भई, मैं नहीं आ सकूंगा पार्टी में। नाटक की तारीख नजदीक आ रही है न।…नहीं भई, मेरे पास समय नहीं है… सॉरी, फिर कभी सही…थैंक यू।

रख देता है।

कविता : लोग आपको पार्टियों पर बुलाते हैं—आप जाते क्यों नहीं?

संजय : वक्त कहां है बेकार की बातों के लिए!

कविता : बेकार बातें?

संजय : और क्या? एक अजीब जमघट होता है इन पार्टियों

हैं। मैनेजर, निर्देशक, अभिनेता, आलोचक सभी होते हैं। बहरहाल नाटक व उसकी समस्याओं पर विचारों का आदान-प्रदान। अक्सर उतना नहीं, 'ऐडजस्टमेंट' करने की होड़ में दूसरों को उखाड़-पछाड़ करना, और अपना एक विशेष स्थान बना लेने की कोशिश करना। यहीं आकर बसना था मैं भी, लेकिन अब घुटन सी होने लगी है यह सब देखकर। ठीक काम करने की बजाय अपनी कुर्सी बचाना ही मुख्य लोगों का ध्येय बन चुका है। छोटे छोटे गिरोह, गुटबन्दी एडमिनिस्ट्रेशन काम बनाकर चलते हैं यह लोग अपने-अपने छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए।

बत्ती धीमी है।

विराम

संजय : आप चुप हो गईं ?

कविता : समझ नहीं आता क्या बात करूँ ?

संजय : मेरी तारीफ करने के अलावा, कुछ भी।

कविता : मुझे बोलने में काफी दिक्कत होती है। बात करने की आदत नहीं रही।

संजय : ऐसा लगा तो नहीं।

कविता : आज बहुत दिनों बाद मैंने एकसाथ इतनी बातें की हैं।

संजय : वरना रोज क्या करती हैं ?

कविता : इस समय अक्सर एक न एक पार्टी होती है। अपने को रोज बढ़िया से बढ़िया कपड़ों में लपेटकर वहां ले जाना होता है। रोज वही बातें, वही लोग, वही शराब के दौर। बीच में कभी-कभी थियेटर—आपका अभिनय—

सिर्फ रूटीन तोड़ने के लिए। वहां भी देखना, सुनना ही—बोलना ना के बराबर। फिर क्या बात करूं ?

संजय : फिर भी कुछ तो।

कविता : आज मौसम अच्छा है।

संजय : किसने कह दिया।

हंसता है। कविता चुपके से उठकर टेलीफोन मिलाती है।

कविता : हेलो ! मिसेज गौतम। क्या'''उन्होंने कहा मैं घर पर हूं। थोड़ी तबीयत खराब है'''आपने कहा नहीं, मैंने टेलीफोन किया था'''क्या बोले? हूं-हां कर रहे थे। अच्छा, ठीक है। थैंक्यू।

फिर नम्बर मिलाती है, शायद फिर 'एन्गेज्ड' है।

कविता : घर का टेलीफोन कटा है शायद'''

इस बीच संजय फिर नाटक पढ़ने लगा है।

कविता : क्या पढ़ रहे हैं?

संजय : नाटक'''

कविता : कब कर रहे हैं ?

संजय : जल्दी ही।

विराम

कविता : जिस समय मैं आई, उस समय आप'''

संजय : अकेला रिहर्सल कर रहा था क्योंकि और लोग आ नहीं सके। समय इतना कम रह गया है और आज रिहर्सल हो नहीं पाई।

कविता : आप हमेशा अभिनेता की तरह ही बोलते हैं।

शंकर : [illegible] है। पर [illegible]
[illegible] है।

कविता : और [illegible] फिर [illegible] के लिए थो?

शंकर : [illegible] है। [illegible]
[illegible]

कविता : [illegible] हूँ क्या?

शंकर : [illegible] है। कई-कई।
होती रहती है।

कविता : तो [illegible] की ट्रैजेडी?

शंकर : कैसी?

कविता : इस कहानी का [illegible]?

शंकर : क्या?

कविता : हूँ।

शंकर : अच्छा, फिर उसको याद कीजिए।

कविता : थोड़ी कहानी बताइए…

शंकर : दरअसल यह प्रेम-कहानी है। युवक और लड़की में गहरा प्यार है।

कविता : वह तो सच्चा होता ही…कम से कम नाटक में।

छिपकर आई है, या···

संजय : या···?

कविता : हां, या ? पढ़ते हैं—पता चल जाएगा।

संजय : आप खुद सीन पढ़ लीजिए।

इस बीच संजय मंच की स्थिति तैयार करता है।

संजय : युवक यहां बैठा पढ़ रहा है—आप उधर से आती हैं।

कविता : मैं ?

संजय : आप नहीं, वह लड़की···चरित्र।

कविता : एक बात बताइए—युवक उसके आने की प्रतीक्षा कर रहा था ?

संजय : था···

हंसी।

कविता : ···मैं आती हूं।

संजय पढ़ रहा है। कविता बाहर से आती है।

लड़की : क्या कर रहे हो ?

युवक : ओह ! तुम। कैसे आई ? मतलब, बस से या···

लड़की : बताओ कैसे आई ?

युवक : टैक्सी से।

लड़की : उहूं।

युवक : पैदल···

लड़की : गलत।

युवक : बस, आ गई ?

लड़की : दौड़ती हुई।

संजय आप हमेशा अपनी तरह
    जो थिड़ की मेरी आवाज

कविता और आपको जिस बात

संजय { . चापलूसी, शुड, हिपोक्रेसी
    वह कहूँ या साहस भी

कविता कहना चमत्कार हो तो

संजय : पति-पत्नी सुख से रहें। प
    दोनों हंसते

कविता तो आज की रिहर्सल ?

संजय क्या करूं ?

कविता : उस लड़की का पार्ट यदि मैं

संजय : सच !

कविता : हां।

संजय : अच्छा, फिर काफी लम्बा

कविता . थोड़ी कहानी बताइए···

संजय : दरअसल यह प्रेम-कहानी
    सच्चा प्यार है। ...

संजय : बताइए।

विराम

युवती : जैसे शाम घिरने लगती है, मैं तुमसे अलग नहीं रह सकती।

युवक : मैं भी अपने को काम में लगा लेता हूं। बैठो, या कहीं घूम आएं।

युवती : नहीं…यहीं तुम्हारे साथ।

युवक के गले में हाथ डाल देती है।
युवक उसकी ओर निहारने लगता है।

कविता : आप तो गंभीरता से…

संजय : अब ?

कविता : गुस्से से देख रहे हैं…। इस तरह देखिए…उदासी से।

करके दिखाती है। संजय की हंसी।

कविता : चलिए, फिर से।

कविता अपना संवाद बोलकर हाथ डालती है। संजय उदासी से देखता है।

कविता : ठीक।

संजय : युवक उदासी से क्यों देखता है ?

कविता : आप जानिए…आपने पूरा नाटक…

संजय : आपकी समझ मुझसे ज्यादा है।

कविता : बात यह है—युवक मध्यवर्ग का हिन्दू है—डर रहा है साला।

दोनों हंसते हैं।

कविता : 'आई एम सॉरी।' सोचता है, किस चक्कर में फंस रहा हूं।

संजय : यहां दोनों की हुगी है।

कविता : पहले कौन हंसेगा?

संजय : साथ-साथ...। चलिए...

दोनों हंसते हैं।

कविता : आपकी हंसी अच्छी नहीं आई।...फिर से।

दोनों हंसते हैं।

लड़की : जैसे शाम घिरने लगती है, मैं तुमसे अलग नहीं रह सकती।

युवक : मैं भी अपने को शाम में समा लेना हूं। बैठो...या कहीं घूम आएं।

लड़की : नहीं...यहीं तुम्हारे साथ।

विराम

कविता : ऐसा वह क्यों कहती है?

संजय : आप बताइए।

कविता : लड़की चाहती है, वह युवक के साथ बाहर निकले, पर डरती है। इसलिए मजबूरन कमरे में ही।

संजय : इसके बाद लड़की युवक के गले में हाथ डाल देती है। यह हो गया...युवक उदास उसकी ओर निहारने लगता है—आगे पढ़िए।

कविता : वाह। आगे कैसे? बिना 'ऐक्शन' के संवाद कैसे? लड़के के बोलने के ढंग में फर्क आना चाहिए।

संजय : आप तो सचमुच...

कविता : चलिए, मैं करती हूं।...यह लड़की नाम ठीक नहीं रहेगा, इसे युवती कहिए। आप देख क्या रहे हैं?

कविता : अन्त क्या होता है?
संजय : अन्त बाद में।
कविता : जो भी हो, जीवन और नाटक में फर्क होना ही चाहिए।
संजय : अभी आपने कहा, ऐसा नहीं होना चाहिए।
कविता : हां, मैंने?
संजय : हां।

सन्नाटा

संजय : अच्छा आप सिर्फ पढ़ती जाइए, युवती का संवाद। मैं अपना अभ्यास करता चलूं।...यह दृश्य।
कविता : चलिए...

विराम

कविता : युवती मुस्कराकर...
संजय : आप मुस्कराइए नहीं, 'डाइलॉग' बोलिए। चलिए...
कविता : कम से कम यहां तो मुस्कराने दीजिए।
संजय : अच्छा, काफी खत्म कर लीजिए।
कविता : यहां बनावटी मुस्कान होनी चाहिए—इस तरह।
संजय : प्लीज, आगे पढ़िए।
कविता : और 'ऐक्शन'?
संजय : यह भी पढ़ दीजिए।
कविता : (नाटक को पढ़ा-पढ़ाकर ही तो सत्यानाश किया है।) अच्छा बोलिए।
युवती : (मुस्कराकर) मेरी ओर देखो। आप देखने क्यों लगे?
संजय : 'सॉरी'...पढ़िए।
युवती : (मुस्कराकर) मेरी ओर देखो।

संजय . बिलकुल नहीं।

कविता युवती ने कहीं अगर आत्महत्या की बात भी की होती।

संजय 'इंटरेस्टिंग'...आपने यह नाटक पढ़ा है?

कविता ऐसे ही होता है।

संजय 'क्लाइमेक्स' से पहले यहाँ तीन हैं। देखिए...पढ़िए, तब तक मैं आपके लिए और काफी...

कविता पढ़ रही है। संजय काफी बना रहा है।

कविता : वाह! वाह!

हँसता

संजय . ऐसा होता नहीं क्या?

कविता · होता तो ऐसे ही है...मगर ऐसा होना नहीं चाहिए।

पढ़ने में डूब जाती है।

संजय : काफी पीती चलिए...

संजय के हाथ से कप उठाकर पीती चलती है और पढ़ने में खो गई है। प्लेट संजय लिए खड़ा है।

कविता : अरे...आप इस तरह। मैंने फिर काफी पी ली?

संजय : आपने नहीं, उस युवती ने।

कविता : क्या?

संजय : हाँ।

कविता : जी नहीं।

संजय : इजाजत हो तो मैं भी काफी पी लूँ?

कविता पढ़ रही है।

सब कुछ कैसे सिहरता है।

युवती : मेरी आँखों में देखो।

युवक : कविता।

कविता : कविता!...तुम युवती का नाम...

युवक : 'मोती...मेरी मोती।'

युवक : तुम।

युवती : तुम्हारे बिना मेरा कोई अस्तित्व नहीं।

युवक : अब भी सोच लो।

युवती : सब साफ हो गई।

युवक : मगर इस समय शादी कर महिला कहलाती है।

युवती : हम सब भी शादी कर महिला बिन [illegible] के हुए...

युवक : कोई इनकार तो किसी है।

युवती : यह इसका नहीं चाहिए।

युवक : यह बहुत जरूर है।

युवती : हम...हम।

कविता : (सहसा) नहीं।

विराम

युवक : [illegible]

संजय : और अपनी पोज़ीशन।

कविता : क्या बजा है?

संजय : साढ़े आठ।

कविता : 'देवदूत' का समय।

संजय : 'देवदूत'?

कविता : रोज़ साढ़े आठ बजे एक 'देवदूत' मेरी ड्यूटी...उसकी निगाहें चमककर बालकोनी पर।

संजय : डाक्टर को क्यों नहीं दिखाती?

कविता : (हिचकियाँ लेती है) अपनी जिम्मेदारी किसीको नहीं देती।

संजय : मज़ाक करती है?

कविता : आप रिहर्सल नहीं करते?

संजय : आपकी तबीयत।

कविता : ऐसा कुछ नहीं, चलिए।

संजय : आप सिर्फ पढ़िए, अभिनय मत कीजिए।

कविता : क्यों?

संजय : आपको...

कविता : तर्क मत कीजिए...

विराम

कविता : चलिए, रिहर्सल कीजिए।

संजय : पहले माफी।

कविता : जी नहीं। ...चलिए, शुरू करती हूँ।

संजय : कहाँ से?

कविता : वहीं से—जहाँ से छोड़ा है।

कविता संजय का सिर दोनों हाथों से

लेते हैं।"'आप खुद खाना बना लेते हैं ?

संजय : आपके लिए 'टोस्ट' और 'आमलेट' बना लाता हूं।

संजय भीतर चला जाता है। कविता पढ़ने लगती है, और थोड़ी देर बाद फोन करती है। निराश रख देती है। फिर पढ़ने लगती है।

कविता : (सहसा ज़ोर-ज़ोर से पढ़ती है) तुम आ गईं"'मैं डरता था, तुम नहीं"'मतलब मैं डर रहा था, मैं इतना भाग्यशाली नहीं। तुम इस तरह चुप क्यों ?

कई बार दुहराती है और एक क्षण पर आकर मूर्तिवत् चुप। समझकर सोफे पर बैठ जाती है। कुछ ही क्षणों बाद भीतर से प्लेट में केवल टोस्ट तथा कुछ और लिए संजय आता है।

संजय : अंडा सड़ा निकला"'। अचार के साथ कभी टोस्ट खाया है ?"'पढ़ लिया ? आप इतनी 'सीरियस' क्यों हैं ?

कविता : कभी आपने सड़े अंडे का आमलेट खाया है ?

संजय : सड़े अंडे का ?

कविता : यह अचार क्या होता है ?

संजय : अचार"'।"'आम का।

कविता : आम क्या होता है ?

संजय : देखिए, ज़्यादा उल्लू मत बनाइए।

कविता : टोस्ट बढ़िया है।

संजय : और अचार ?

परंपरा। तुम इनमें से अपने जितने लोगों का सुख रखोगी, उतनी ही तुम्हारी खुशी है।

युवती : तुम कब की, किसकी बात कर रहे हो?

युवक : बिलकुल इसी वक्त...इसी क्षण की बात।

युवती : मैं तुम्हारे साथ हर संघर्ष, हर चुनौती लेने को तैयार हूं।

युवक : इतना आसान नहीं।

युवती : मुझे नहीं जानते।

युवक : जानता हूं—हर लड़की की तरह तुम भी...

युवती : चुप रहो।

युवक : सुनो।

युवती : कविता मर गई।

संजय चुप देखने लगता है।

कविता : क्यों?

संजय : आपने कहा—'कविता मर गई।'

कविता : अच्छा?

संजय : सच...

कविता : वाह! युवती आत्महत्या के लिए कहती है...और युवक शादी के लिए तैयार हो जाता है। वाह, खुदकशी की बात जैसे दहेज थी।

ठहाका लगाकर हंसती है।

संजय : कविता जी, यह नाटक है।

कविता : कितना बचकाना लगता है।...

संजय : सुनिए, मैं आपके लिए कुछ खाना तैयार करता हूं, तब तक आप...यह आखिरी सीन...

कविता : जी नहीं, मुझे कतई भूख नहीं। हम लोग 'डिनर' लेट

कविता : अब वह युवती नहीं, कोई नाम।

संजय : एक ही बात।

कविता : जी नहीं, नाम, गुण को खत्म कर देना है'''और उस नाम से अगर कहीं'''

संजय : आप कभी पूरी बात नहीं कहती।

कविता : भाषा का दुरुपयोग नहीं करना चाहती।

संजय : मतलब, नाटककार करते हैं?

कविता : मतलब आप निकालिए।

विराम

संजय : अच्छा, युवती कैसे आएगी?

कविता : बड़ा आसान है'''बिलकुल सहज ढंग से।

संजय : वह सहज कैसे होगी?

कविता : स्त्री के सहज-असहज में फर्क कर पाना मुश्किल है।

संजय : कमाल है!

कविता : चलिए, बैठिए'''देखिए वह आती है।

संजय बैठा इन्तजार करता है। युवती आती है।

युवक : कौन?

युवती : मैं।

युवक : तुम आ गई? मैं डरता था, भय था मुझे, कहीं तुम आ न सको।

युवती : कैसी बात करते हो?

युवक : पर यह क्या! तुम्हारी आंखों में आंसू!

दोनों चुप रह जाते हैं। एकाएक कविता को हंसी आ जाती है।

कविता : वाह ! मज़ा आ गया !

दोनों खा रहे हैं।

कविता : मुझे पता नहीं लगा था, इस समय भी खा सकती हूं।

संजय : आखिरी सीन पढ़ लिया ?

कविता : (चुप है।)

संजय : (अभिनय के ढंग से) आखिरी…सीन…पढ़ लिया ?

कविता : बहुत…बहुत पहले।

संजय : कैसा लगा ?

कविता : (हंसती है।)

संजय : ऐसा नहीं होता ?

कविता : होता तो ऐसा ही…पर इसका कोई असर नहीं रह जाता। आगे वही एक अहसास घर कर जाता है—यहां हर चीज मर जाती है। उसी डर से लड़ने के लिए शादी…बच्चे…मकान, घर-गृहस्थी और…और…"

संजय : कभी भागी हैं ?

कविता : सिर्फ एक बार…

संजय : पुलिस ने गिरफ्तार किया ?

कविता : आत्मसमर्पण…

संजय : पुलिस को ?

कविता : चलिए, रिहर्सल कीजिए।

संजय : तबीयत ?

कविता : आदत।

विराम

संजय : मैं आज इसी सीन के … था। युवती कैसे आए

मैं सोचता हूँ"'। हम यहां से सीधे कलकत्ता जाएंगे"'
वहां से जगन्नाथपुरी"'वहीं शादी करेंगे"'फिर
कोणार्क, और दार्जिलिंग में सुहागरात"'

युवती : मेरे देवता !

सहसा कविता रुक जाती है।

कविता : 'मेरे देवता'"'साली झूठी।

संजय : ओर वह ही तो साहब।

कविता : लेकिन युवती ने 'मेरे देवता' क्यों कहा ?"'स्वामी
कहती"'राजा कहती"'बालम कह सकती थी।

संजय : पता नहीं।

कविता : वैसे देवता भी चलेगा।

संजय : चलेगा ?

कविता : हां, चलेगा।

युवती : मेरे देवता।

संजय : अब मुझे हंसी आ रही है। आपने 'मेरे देवता' ऐसे
कहा, जैसे सब्जी काट रही हो।

युवती : मेरे देवता।

संजय : रुकिए तो"'पहले मुझे कहने दीजिए।

युवक 'बात करने का वक्त"'संवाद
दुहराता है।

युवती : मेरे देवता।

युवक : घर वालों को बता कर आई हो या"'?

युवती : बता कर

युवक : 'गुड'।"'उन्होंने क्या कहा ?

युवती : कुछ नहीं, बहुत खुश हुए।

संजय : कुरसी तो नहीं है और अन्य कुरसी है!

कविता : एक सहज है दूसरा असहज।

संजय : जो सहज है वही कीजिए।

कविता : कौन कर सकता है?

संजय : ठीक कीजिए।

कविता : कर दूँ? कीजिए।

संजय : अरे, एकाएक आँसू!

दोनों चुप हैं। कविता की आँखों में आँसू।

युवक : तुम्हारा सामान?...अच्छा है सामान नहीं।...यह देखो हमारे दो टिकट। तूफान मेल से चलना है...

युवती : तुम ग्रेट हो।

युवक : इसमें क्या? जब फैसला कर लिया तो कर लिया।

युवती : तुम्हें कभी नहीं भूल पाऊँगी।

युवक : जल्दी करो, वक्त नहीं है।

युवती : तुम जैसा महान पुरुष।

युवक : टैक्सी लाने को कह दिया है...बस, दस मिनट में टैक्सी बाहर दरवाजे पर खड़ी होगी। पानी पियोगी?

युवती : तुम पी लो।

युवक : मेरी प्यास तुम हो।

युवती : मैं तुम्हें कभी नहीं भूल पाऊँगी।

युवक : मेरा जन्म तुम्हारे ही लिए हुआ था।

युवती : बैठो।

युवक : अब बैठने का वक्त नहीं है।

युवती : हमें कोई अलग नहीं कर सकता...हम एक-दूसरे को...

युवक : बात करने का वक्त नहीं है। हमें अपने सफर के बारे

तूने विवश किया।

युवती : बिगड़ा क्या है।

युवक : बिगड़ा क्या है ?

युवती : उल्टे बन गया—शादी करके जीवन-भर तुमसे प्यार करूंगी।

युवक : तू पागल तो नहीं हो गई ?

युवती : हां, हूं।

युवक : यह नहीं हो सकता।

युवती : क्या ?

युवक : मैं तुझे यह खुदकुशी नहीं करने दूंगा।

युवती : कैसी खुदकुशी ?

युवक : टैक्सी आ गई…चलो…चलो…

युवती : भावुक मत बनो। समझदारी से काम लो…

युवक : समझदारी…

हथेलियों में मुंह छिपाकर रो पड़ता है।
युवती बाहर आती है।

युवती : चली गई टैक्सी…। यह क्या बचपना है ? मुझे देखो…मैं तुम्हें छोड़ कहीं चली तो नहीं गई ? तुम्हारी हूं। सदा रहूंगी। तुम जब चाहना…

युवक : चुप रहो।

युवती : नाराज मत हो। बड़ी समझदारी की है। देखना, इसका मज़ा बाद में आएगा…

युवक : चली जाओ यहां से।

कविता : ऐसे नहीं—उठो, मैं कहती हूं—'चली जाओ यहां से।'

संजय : (मन्त्रमुग्ध) यह कैसे कहा ? यह आवाज़ !

संजय : कायरता···
कविता : फिर भी स्वास्थ्य के लिए बहुत-बहुत अच्छा।
संजय : 'हिपोक्रेसी'···
कविता : आदत···
संजय : एक कैपस्यूल साढ़े आठ बजे, दूसरी ग्यारह चालीस पर···
कविता : आप समझते हैं जो आप करते हैं वही बहादुरी है, वही सच्चाई है, उसीमें गति है ?
संजय : कुछ तो है उसमें।
कविता : जी में आया, पत्नी छोड़ दी, जैसे कोई भूमिका पसन्द न आए।
संजय : उसके साथ मर जाता नहीं तो ?
कविता : नाटक एक का चरित्र, याद किया, कुछ दिन मंच पर निभाया, भुला दिया।
संजय : कुछ दिन ही सही, उसे महसूस किया, पूरी तरह जिया, भोगा, एक तेज शिद्दत के साथ उसे···। हम अभिनेता हैं पर···
कविता : अभिनेता, अभिनेता। अभिनेता क्या आदमी नहीं होता, उसमें क्या भावनाएं नहीं होतीं ?
संजय : होतीं क्यों नहीं। आप-से, साधारण आदमी से कहीं अधिक भावुक होता है वह।
कविता : आप नहीं हैं। आप हैं केवल एक बनावटी आदमी।
संजय : वह आप हैं।
कविता : आप मुझपर रोब नहीं गांठ सकते।
संजय : मतलब ?

युवक अटैची खोलकर साड़ी निकालकर
युवती के ऊपर फेंकता है।

युवक : आग लगा देना।

युवती : उस औरत के निर्माण मे तुम्हारा भी हाथ है। यह साड़ी सहेजकर रखूंगी। इसको पहनकर...

युवक : बधाई।

युवती साड़ी में मुंह गाड़े हुए है।

युवक : कृपा कर अब जाओ।

कविता : आप ऐसे बोल रहे हैं कि मैं अब घर जाऊं। जी नहीं। पानी तो पिलाइए।

संजय : अभी लाया।

संजय भीतर जाता है। कविता इस बीच जैसे उसी युवक के सामने खड़ी हो। पानी लिए संजय आता है।

संजय : पानी।

कविता : नाटक मे कुछ और हो सकता था।

संजय : हो सकता है ?

कविता : क्यो नहीं ?

संजय : जैसे आप अपनी हर चीज निश्चित रखती नाटककार भी अपने चरित्रों के बारे मे [illegible]

कविता : नाटक इतना निश्चित क्यों है ?

संजय : जीवन क्यो निश्चित [illegible]

कविता : वह बदला नही जा सकता।

संजय : उसे बदलना क्यों नही चाहतीं

कविता : मजबूरी...

कविता : आएगा ? मुझमें नहीं।

संजय : आपमें...है।

कविता : (सहसा) बड़ी अच्छी चूड़ियां हैं। कहां से लाए ?

संजय : पहनोगी ? नाटक में यह नहीं है...

कविता : समझ ली है।...चलो। अपने हाथ से (निकालकर देती है।) पहना ही दो।...ऐसे नहीं...धीरे-धीरे...चूड़ी टूट जाएगी।

संजय : टूट जाने दो...बहुत सारी हैं।

कविता : चूड़ी टूटने का मतलब जानते हो ?...बड़ा अशुभ माना जाता है।

चूड़ी टूट जाती है।

कविता : क्या कर दिया ?...लाल धागा होगा ?...चूड़ी टूटने से लाल धागा झट बांध लेना चाहिए।

संजय : मुश्किल है।

विराम

संजय : क्या हो गया ?

कविता : (चुप)

संजय : तबीयत तो ठीक है ?

कविता : तबीयत...हां...हां।

कविता अपने को जैसे ठीक कर रही होती है।

संजय : कविता।

कविता : गलती मेरी ही थी—चूड़ी न पहनती...

संजय : तभी नाटक में हीरो हीरोइन को चूड़ी नहीं पहनाता।

कविता : मैं आपकी पत्नी नहीं।

संजय : आप बिल्कुल बेकार की बातें करती हैं।

कविता : (गहरा) कहा था न, बातें करना नहीं आता।

विराम

कविता : आपका मूड खराब हो गया—चलिए, डिनर कीजिए।

संजय : जी नहीं, अब आप जाइए।

कविता : कहाँ? कैसे जा सकती हूँ?

संजय : जो मन चाहिए।

कविता : चलिए, डिनर कीजिए।

संजय : नहीं।

कविता : आप लोगों के लिए हर चीज़ 'नहीं', बस। चहिए मुझसी का यह 'हालचाल'।

संजय : (चुप)

कविता : यह जाने के लिए नहीं, भागने के लिए आई थी।

संजय : (चुप)

कविता : नहीं समझे!

संजय : नहीं।

कविता : भागना कैसे होता है?

सन्नाटा खिंच जाता है।

कविता : भाग…ना।

संजय : घर में क्या करती हैं?

कविता : कुछ नहीं।

संजय : कुछ तो?

कविता : तो…

संजय : कुछ न करने से आत्मा बीमार हो जाती है।

कविता : बिना किसी विशेषण के बोलो।
संजय : उसके बिना कैसे ?

विराम

कविता : अब भी हो सकती हूं।
संजय : क्या ?
कविता : क्यों नहीं ? कोई अपराध है क्या ?
संजय : क्या बोल रही हैं ?
कविता : क्यों ? देखो, कहीं कुछ जल रहा है।
संजय : नहीं तो।
कविता : देखो, देखो···
संजय : कहां ?

कविता आवेश में वस्त्र उतारना शुरू करती है। संजय घबड़ा जाता है।

संजय : यह क्या कर रही हो ?
कविता : कहीं कुछ जल रहा है।
संजय : कविता···कविता···
कविता : बचाओ···बचाओ···

चीखती हुई सोफे पर गिर जाती है। संजय सख्त खड़ा रह जाता है।

संजय : डाक्टर बुलाऊं ?
कविता : करफ्यू हट गया ?
संजय : अभी नहीं।
कविता : 'रिलेक्स' हुआ ?
संजय : पूछता हूं।

फोन करता है।

कविता : इसिए नहीं, हर विश्वास के पीछे…

संजय : विश्वास नहीं…

कविता : सबको अपनी-अपनी जिन्दगी जीनी ही होती है।

संजय : और काफी बना ले आता हूं।

कविता : नहीं, नहीं, अब बिना स्नान किए कुछ खाऊं-पीऊंगी नहीं।

संजय : क्या हो गया ?

कविता : कुछ भी नहीं…चलिए, सीन खत्म कर लें।

संजय : ना बाबा…कहीं कुछ हो गया तो…

कविता : ऐसा लगता है ?

संजय : लगता है।

कविता : क्या लगता है ?

संजय : लगता है।

कविता : हूं ?

संजय : आप मुझे बहुत अच्छी लगती हैं।

कविता : अरे, देखो न…मेरा जूड़ा खुल गया।

(जूड़ा बनाने लगती है।)

कविता : कैसी लगती है—केश-शृंगार करती हुई स्त्री ?

संजय : (चुप है।)

कविता : ओ…बहरे हो क्या ?

विराम

कविता : अब कैसी लगती हूं ?

संजय : कैसे कहूं ?

कविता : मौका मिला है कह लो, वरना पछताओगे।

संजय : बहुत…

कविता काफी बना रही है।

कविता : क्या देख रहे हैं ?

संजय : मेरे भीतर जैसे कोई चट्टान थी जो टूट रही है।

कविता : किसी नाटक का 'डायलाग' है न ?

संजय : (चुप है।)

कविता : लो काफी।

दोनों पीते हैं।

संजय : ज़रा हाथ देखूं।

कविता : जानते हैं देखना ?

वह हाथ दे देती है।

संजय : नब्ज़ बड़ी तेज़ चल रही है।

कविता : सिर्फ तेज़ ?

संजय : कोई काम क्यों नहीं कर लेती ?

कविता : सवाल इज़्ज़त का है ?

संजय : 'एक्टिंग' कर सकती हैं।

कविता : वे नहीं चाहेंगे।

संजय : पूछकर देखिए तो।

कविता : पता है।

विराम

कविता : प्यासी हूं'''प्यास लगी है।

संजय : लीजिए।

पानी पीती है।

कविता : और। (हंसना शुरू करती है) और।

संजय : और लीजिए।

गिलास का पानी संजय के ऊपर फेंक

संजय : हेलो'''जी ? सुबह पांच बजे तक है ? कुछ 'रिलैक्स' हुआ ? जी'''जी'''हां'''हूं, जी।

रखता है।

संजय . सिर्फ पायल, मरी,ज बच्चों के लिए'''

कविता : (अजब ढंग से हंसकर रह जाती है।)

संजय : आप तीनों मे नहीं आतीं'''

कविता · तीनों'''

संजय : डाक्टर बुलाऊं।

कविता : काफी पिलाओ यार।

संजय : 'गुड'''फाइन'''

संजय भीतर जाता है। कविता फोन करती है। फोन बंसे ही है। रख देती है। संजय आता है।

कविता : इतनी जल्दी ?

संजय : उसी वक्त पानी चढ़ा आया था'''

कविता : पानी भाप बनकर उड़ा नहीं ?

संजय : केतली 'आटोमेटिक' है।

कविता : 'आटोमेटिक'

संजय : अब आपको 'ब्लेक काफी' पीनी पड़ेगी।

कविता : किसी पुरुष के सामने कपड़ा उतार फेंकना। मेरे पति 'टेक्सटाइल मिल' के मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं।

संजय : जी ?

कविता : इस बार मैं बनाती हूं काफी।

संजय : आप आराम कीजिए।

कविता . क्यों ? मुझे क्या हुआ ?

कविता काफी बना रही है।

कविता : क्या देख रहे हैं ?

संजय : मेरे भीतर जैसे कोई चट्टान सी जो टूट रही है।

कविता : किसी नाटक का 'डायलाग' है न ?

संजय : (चुप है।)

कविता : लो काफी।

दोनों पीते हैं।

संजय : ज़रा हाथ देखूं।

कविता : जानते हैं देखना ?

वह हाथ दे देती है।

संजय : नब्ज़ बड़ी तेज़ चल रही है।

कविता : सिर्फ तेज़ ?

संजय : कोई काम क्यों नहीं कर लेतीं ?

कविता : सवाल इज्जत का है ?

हैं।

बेतरह हंसती है।

संजय : अरे यह क्या किया ?

कविता : भीग गए ? उतार दीजिए।

संजय : बदल आता हूं।

कविता : ना।

पकड़ लेती है। खुद बटन खोलकर संजय की कमीज़ उतारना चाहती है।

संजय : क्या कर रही हो ?

संजय के खुले सीने में मुंह गाड़ देती है।

संजय : आपकी तबीयत ठीक नहीं है ?

कविता : लगता है न ?

संजय : लगता है।

कविता : थोड़ी रोशनी कम कर दूं ?

बढ़कर एक टेबल-लैम्प बुझा देती है।

संजय : कविता।

कविता : क···वि···ता···

संजय : मैं तुम्हें।

कविता : मुझे ? सच ?

संजय : तुम चाहो तो।···

कविता : चाहती हूं।

संजय धीरे-धीरे उसे अंक में भर लेता है।

कविता : (सहसा) नहीं।

संजय : (अवाक्)

कविता : नहीं, नहीं, मैं नहीं कर सकती।

संजय : चाहती नहीं ?

कविता : चाहती हूं पर'''
संजय : झूठी।
कविता : नहीं।
संजय : बुज़दिल।
कविता : नहीं।
संजय : मेरे साथ नाटक?
कविता : नहीं'''नहीं।
संजय : मुझे क्या समझ रखा था?
कविता : मुझपर दया करो!
संजय : क्यों यह सब किया?
कविता : पता नहीं।

संजय उसे पकड़ता है। वह चीखती है।

संजय : क्या हो तुम?
कविता : (पूर्तिवत्)
संजय : क्या हो?
कविता : (मुंह छिपा लेती है।)
संजय : कायर'''

कविता मूर्तिवत् चुप

संजय : जान-बूझकर। हर पुरुष तुम्हारे लिए'''लगा
तुम निश्चित की बाट से बाहर निकलना चाहती हो
सोचा, साथ दूं। पर किसको, क्यों?
कविता : (उसे एकटक निहारती है।)

संजय अन्दर कमरे में चला जाता है।
कविता सोफे पर गिर जाती है, प्रक
बुझता है।

दूसरा दृश्य /

तीसरा दृश्य

गौतम फर्श पर अस्त-व्यस्त सो गया है। टेबल पर शराब की करीब-करीब खाली बोतल पड़ी है। बाहर सहसा शोर होता है। फायरिंग और चीखें। शोर। मनीषा भागी हुई आती है। अन्दर आकर भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लेती है और आंख मूंदे दरवाज़े के सहारे खड़ी रह जाती है। बढ़कर बोतल से थोड़ी ड्रिंक लेती है।

मनीषा : (दो घूंट पीकर) जैसे कोई मेरा पीछा कर रहा है। क्या है वह? कौन है? जहां से भाग निकली थी कुछ समय पहले फिर वही स्वयं आ गई? जिस चीज़ ने यह कमरा छोड़ने पर मजबूर किया वही फिर यहां ले आई। सोचा था यहां से भागकर निकल जाऊंगी, लेकिन"'बाहर भी जैसे इसी कमरे का विस्तार है। पूरा शहर जैसे यही कमरा है—झूठ, कायरता, वासना, विस्तार मे जाकर, अपराध, हिंसा, बलात्कार बन गए हैं। कैसे सोया हुआ है? एक अबोध बालक की तरह, जागते हुए देखा दुःस्वप्न आंख लगते ही टूट गया हो जैसे। यह नींद के कारण है या नशे के"'नींद ही है शायद, नशे मे होश खो बैठनेवाले तो शहर के विस्तार मे, सड़कों पर, गलियों मे, पागलों की तरह दौड़ रहे

थे। लपलपाती जीभें, अंगार आंखें; बुझा विवेक।''' ओ, देखो मैं लौट आई, जहां मेरा दम घुटने लगा था, वही खुलकर सांस ले रही हूं अब। जागो, आंखें खोलो, मेरे साथ मनमानी करो—मैं कुछ नहीं करूंगी, भागूंगी भी नहीं। भागना आसान नहीं। भागकर कोई जाएगा कहां, जब सब जगह यही कुछ है? उठो''' ए उठो।

झकझोरती है।

गौतम : (उनींदा) कौन?

मनीषा : मिसेज़ गौतम अभी तक नहीं लौटीं?

गौतम : तुम'''आप?

मनीषा : हैलो'''मैं फिर आ गई। लेकिन अब जाऊंगी नहीं, भागूंगी नहीं। अब मुझे तुमसे डर नहीं।

गौतम : 'आई एम वेरी सॉरी'।

मनीषा : 'सॉरी' क्यों?

गौतम : शराब कुछ ज्यादा हो गई थी इसीलिए मैं अपने आपे में नहीं रहा। मुझे माफ कर दो।

मनीषा : माफी? किस बात की?

गौतम : मुझे वह सब नहीं करना चाहिए था।

मनीषा : तुमने किया ही क्या?

गौतम : झूठ बोला, तुम्हारे साथ जबरदस्ती करने की'''

मनीषा : कोशिश की। हां?

गौतम : मैं शर्मिंदा हूं। इसलिए नहीं कि मैंने तुम्हारे साथ सोना चाहा—लड़कियों की मुझे कभी कमी नहीं रही। तुम्हारी उम्र की बीसियों लड़कियां मेरे यहां काम

करती है। अपने के कुछ भी हुए बाहर से इसी [illegible]
[illegible] रहती है—इसीलिए कुछ कहा का [illegible] है
पहले कभी नहीं किया। इसीलिए कि तुम्हारे विश्वास को
ठेस पहुंचाई है वह सब करके।

अनीता : मेरे विश्वास को ठेस नहीं पहुंची, वह और पक्का हुआ। मुझे लगता है परिवर्तन का अहसास है और हम जीना चाहते हैं जीवन को संपूर्ण बनाना चाहते हैं। तुमने ऐसा पहले कभी नहीं किया था, आज किया ···इसी लिए शायद वो जीवन कुछ भी रहे हो इसके कुछ बदलना चाहते हो।

गौरव : शायद तुम ठीक कह रही हो।

अनीता : लेकिन मन्नी के कमरे पर आज कहें। ऐसे कोई कुछ ही नहीं हो। हम सब इतना सारी बार करते रहते हैं, क्योंकि यही जरूरी है। हम बदलते रहे हैं, कुछ भी मेरा, कुछ भी अनीता, कुछ भी मिलाकर हम जीवन को बदल सकते हैं, समाज को बदल सकते हैं, लेकिन वह बदलना तो केवल चाहते हैं, कुछ देर के लिए है···

गौरव : इस उम्र में तुम इतना कुछ कैसे जानती हो ?

अनीता : मैं भी पहले नहीं जानती थी—बाद हो जाता है इतना कुछ—आगे से देखकर—घर पर सोचकर, इस बच्चू के कारण, तुम्हारे कारण, अपने यहां से भागने के कारण।

गौरव : मेरे कारण तुम्हें यहां से भागना पड़ा।

अनीता : ना भागती तो इतना कुछ जान पाती ? भागने के बाद

गौतम : तुम मेरी मित्र हो ?

मनीषा : उन्हें अच्छा लगेगा ? वह क्या समझेंगी 'इस कमरे की हालत और मुझे यहां देखकर ?

गौतम : जो जी आए समझें। मुझे किसी की परवाह नहीं, किसी से कोई डर नहीं।

मनीषा : तुममें यह परिवर्तन !

गौतम : तुम्हारे कारण।

मनीषा : यहां आओ'''मेरे पास'''और पास (उसकी गोद में सर रख देती है।) तुम्हारा यह रूप एक 'रिएलिटी' समझकर मुझे 'एक्सेप्ट' कर लेना चाहिए था, 'रिएलिटी' से भागना मुश्किल है।

गौतम : चुपचाप लेटी रहो—आराम से—अगर कहो तो अंदर कमरे में सुला आऊं।

मनीषा : नहीं, यहीं रहना चाहती हूं—इसी तरह।

गौतम : (उसके बाल सहला रहा है और उसे देख रहा है।)

मनीषा : क्या सोच रहे हो ?

गौतम : बहुत कुछ एक साथ।

मनीषा : मुझे नहीं देख रहे ?

गौतम : देख रहा हूं।

मनीषा : क्या ?

गौतम : तुम्हारे चेहरे पर सहन करने से पैदा हुई कांति।

मनीषा : सिर्फ वही ?

गौतम : नहीं, उस कान्ति के कारण दमकता हुआ तुम्हारा रूप।

मनीषा : इस रूप को अपनाना नहीं चाहते ?

जाया गया। मुझसे कहा गया, मैं नक्सलाइट हूं। मेरे मना करने पर डंडों की बौछार शुरू हुई क्योंकि बिना पिटे कौन मानता है कि वह नक्सलाइट है। उन्हें मेरे जिस्म पर यह कपड़े अच्छे नहीं लग रहे थे, इसलिए उन्हें उतार दिया गया। इसके बाद जो हुआ वह कहना मुश्किल है। मैंने अपने सारे जीवन में जितने लोगों के साथ शरीर-सम्बन्ध रखा उससे ज्यादा एक घंटे में…

गौतम : ऐसा भी होता है?

मनीषा : कल तक मैं भी नहीं मानती थी।

गौतम : यहां कैसे पहुंचीं?

मनीषा : सब कुछ खत्म होने पर उन्हें लगा मैं नक्सलाइट नहीं हो सकती। ज्यादा से ज्यादा एक 'स्ट्रीट वाकर' हो सकती हूं। और मुझे पास के चौक पर उतार दिया गया।

गौतम : यह अमानवीय है।

मनीषा : इसीलिए कहती थी, तुम शर्मिंदा क्यों होते हो? तुमने तो केवल कोशिश ही की। वह भी खुद नहीं, कुछ मेरे उकसाने पर, कुछ शराब के नशे में।

गौतम : लेकिन इस सबका ज़िम्मेदार मैं हूं।

मनीषा : नहीं, केवल तुम नहीं, हम सब जो अपने-आपको ज़िन्दा समझते हैं।

गौतम : सुनो, चलो, अंदर चलकर आराम कर लो।

मनीषा : अगर मिसेज़ गौतम आ गईं तो?

गौतम : आने दो। मैं साफ-साफ कह दूंगा कि तुम…

मनीषा : कि मैं…?

साफ दिखा नहीं, अब लगता है तुम्हारे सामने मैं एक नन्हा-सा बच्चा हूं—सचमुच नन्हा बच्चा।

मनीषा : आओ नाचें, खेलें। दौड़कर अंदर छुप तो नहीं जाओगे?

गौतम : नहीं, नहीं, नहीं।

दौड़कर मनीषा को बांहों में भर लेता है।

मनीषा : सुनो…

मोमबत्तियां जलाती है।

दोनों के हाथ में एक-एक।

मनीषा : तुम्हें कोई मंत्र याद है?

गौतम : (सोचता है)

मनीषा : अरे, तुम्हारी शादी में तो मन्त्र पढ़े गए होंगे?

गौतम : कुछ याद नहीं आ रहा।

मनीषा : कोई भी, कुछ भी?

गौतम : हां…ओम नम. स्वाहा…

मनीषा : ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

गौतम : ओम् नमः स्वाहा…

मनीषा : ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

यह कहते हुए दोनों परिक्रमा करने लगते हैं—एक बिन्दु पर आकर दोनों आलिंगनबद्ध हो जाते हैं। मन्त्र गूंजता रहता है।

गौतम : नहीं, अब नहीं चाहूंगा। केवल आंखों की ज्योति में बसा लेना चाहता हूं।

मनीषा : तब तो चाहते थे।

गौतम : *तब यह सब कहां देख पाता था ?*

मनीषा : तब बहुत डरे हुए थे डरकर ?

गौतम : डर तब रहा था, अब कोई डर नहीं।

मनीषा : मैं तब भी यही थी, तुम ठीक से देख नहीं पाए।

गौतम : पर अब मैं कुछ और हूं।

मनीषा : बताओ न अब तुम क्या हो…कहीं फिर अपने उसी डिब्बे में तो बंद नहीं हो गए जिससे बाहर आने के लिए तुमने शराब का सहारा लिया था।

गौतम : (चुप)

मनीषा : तुम अब भी वहीं हो। चलो, बाहर आओ—इस बार बिना शराब पिए।

गौतम : (चुप)

मनीषा : चुप क्यों हो गए ? इतना मुश्किल नहीं है यह सब। अच्छा…यह टाई निकाल दो। लाओ, मैं तुम्हारी यह कमीज निकाल दूं। इसी तरह तुम भी मेरा कुरता निकालो…निकालो…, नहीं निकलता तो फाड़ दो…

गौतम धीरे-धीरे उसे अंक में भर लेता है।

गौतम : *कितनी सुन्दर हो तुम…कितनी निर्मल ?*

मनीषा : पहले नहीं देखा था ?

गौतम : तब आंखें बन्द थीं, अन्दर-बाहर अंधेरा था। उसमें साफ-

साफ दिखा नहीं, अब लगता है तुम्हारे सामने मैं एक नन्हा-सा बच्चा हूं—सचमुच नन्हा बच्चा।

मनीषा : आओ नाचें, खेलें। दौड़कर अंदर छुप तो नहीं जाओगे?

गौतम : नहीं, नहीं, नहीं।

दौड़कर मनीषा को बांहों में भर लेता है।

मनीषा : सुनो...

मोमबत्तियां जलाती है।
दोनों के हाथ में एक-एक।

मनीषा : तुम्हें कोई मन्त्र याद है?

गौतम : (सोचता है)

मनीषा : अरे, तुम्हारी शादी में तो मन्त्र पढ़े गए होंगे?

गौतम : कुछ याद नहीं आ रहा।

मनीषा : कोई भी, कुछ भी?

गौतम : हां...ओम नमः स्वाहा...

मनीषा : ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

गौतम : ओम् नमः स्वाहा...

मनीषा : ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

यह कहते हुए दोनों परिक्रमा करने लगते हैं—एक बिन्दु पर आकर दोनों आलिंगनबद्ध हो जाते हैं। मन्त्र गूंजता रहता है।

कविता : सुनिए, दरवाज़ा खोलिए, मुझे आपसे कुछ कहना है।

संजय : (अंदर से) सो जाइए।

कविता : नींद नहीं आ रही।

संजय : (अंदर से) आ जाएगी, कोशिश तो कीजिए।

कविता : प्यास लगी है?

संजय : (अंदर से) पानी रखा है वहीं। पी लीजिए।

कविता : आप बहुत नाराज़ हैं मुझसे, मैं जानती हू, फिर भी मैं मेहमान हू आपकी। इतना ख्याल तो कीजिए।

संजय : (दरवाज़ा खोलकर) मुझे तो ख्याल है कि आप मेहमान हैं, आप ही भूल गई थीं।

कविता : अब याद रखूंगी।

विराम

संजय बैठकर नाटक पढ़ने लगता है।

कविता : यूं ही बैठे रहेंगे? कुछ बोलेंगे नहीं अपने मेहमान से?

संजय : आप सोईं क्यों नहीं?

कविता : अन्दर भी क्या आप यही नाटक पढ़ रहे थे?

संजय : यह भी पढ़ रहा था और शायद कुछ सोच भी रहा था?

कविता : क्या?

संजय : छोड़िए उसे।

कविता : अच्छा एक बात बताइए। आपके लिए नाटक ही सब कुछ है?

संजय : अब तो शायद वही सब कुछ है। पन्द्रह वर्ष...जीवन के पन्द्रह वर्ष मैंने इसीमें लगा दिए। कुछ मिलता है या नहीं, यह तो सोचे-समझे बिना मैं लगा रहा, जिसका

नहीं समझ पाता।

कविता : थोड़ा पानी दीजिए !

संजय उसे पानी देता है।

संजय : ऐसा क्यों होता है ? मैं क्यों अपने इर्द-गिर्द बिखरे हुए चरित्रों को समझ नहीं पाता ? क्यों मुझे उनकी छोटी से छोटी क्रिया-प्रतिक्रिया अजीब लगती है ? शायद इसी कारण मैं किसीसे कोई सम्बन्ध निभा नहीं पाता। . . .

कविता : आप चरित्रों की दुनिया में रहकर स्वयं एक चरित्र बन गए हैं। वैसे अपने-आप में आप एक महान चरित्र हैं।

संजय : अफसोस नहीं !

कविता : *(हंसती है।)* आपने मुझे क्या समझा ?

संजय : मैंने आपको एक स्त्री समझा था।

कविता : था ? अब नहीं समझते ? जैसे मैं आपको केवल एक पुरुष समझती हूं !

संजय : केवल एक पुरुष ?

कविता : हां, एक पुरुष। उसके सब अर्थों में। पुरुष जिसके बिना स्त्री का कोई अस्तित्व नहीं, पुरुष जिसकी चाह हर स्त्री अपनी आत्मा में पालती है, पुरुष जिसकी गोद ही स्त्री की मुक्ति है...

संजय : आप एक बार फिर से वही शुरू कर रही हैं ?

कविता : हां, एक और नाटकीय मोड़। सोचा-समझा हुआ, निर्धारित किया हुआ, शायद निश्चित किया हुआ। लेकिन जैसा नाटक में होता है वैसा नहीं।

संजय : आप जानिए, पता नहीं आप क्या हैं, क्या चाहती हैं ?

कविता : आपको तो यह भी पता नहीं है कि आप क्या हैं और क्या चाहते हैं।

संजय हंस पड़ता है।

संजय : इतनी निडर हैं आप?
कविता : वही तो···वही तो होना चाहती हूं।
संजय : अगर आप ऐसी थीं···
कविता : अगर आप ऐसे होते···
संजय : बात तो पूरी कहने दीजिए।
कविता : बात क्या पूरी हो पाती है?
संजय : सुनो तो···
कविता : सुनो तो···
संजय : तुम पहले···
कविता : तुम पहले···
संजय : मैं पूछ रहा था···
कविता : मैं पूछ रही थी···
संजय : आज सारी रात यहीं होगा।
कविता : आज सारी रात यहीं होगा।
संजय : देखो, बोर मत करो।
कविता : देखो, बोर मत करो।
संजय : हा···हा···हा···हा···
कविता : हा···हा···हा···हा···

विराम

कविता : क्या सोच रहे हैं?
संजय : चलिए, अंदर चलिए।
कविता : नहीं बाहर

संजय : बाहर माने सड़क पर ?

कविता : बाहर माने सड़क पर ?

विराम

संजय खिड़की बंद करने के लिए जाता है।

कविता : बंद मत कीजिए। खुली रहने दीजिए। आज सब कुछ खुला रहने दीजिए।

संजय कविता को अंक में भर लेना चाहता है।

कविता : रुकिए···ऐसे नहीं। ऐसे नहीं। (कमरे में नजर दौड़ती है।) ऊपर देखिए···देखते···रहिए। हंस का एक जोड़ा उड़ रहा है···उड़ता-उड़ता पास आ रहा है···और पास···बिल्कुल सिर के ऊपर···उनके पंख से दो पंख टूटकर हवा में उड़ रहे हैं, नीचे गिर रहे हैं···पकड़ लो हवा में···जमीन पर गिरने न पाए···पकड़ लो···शाबाश !

जैसे दोनों के हाथ में वह अंश आ जाता है।

कविता : अपना पंख मेरे जूड़े में लगाओ···मैं अपना पंख तुम्हारे बालों में बांधती हूं।

संजय वह उद्दाम पंख कविता के जूड़े में लगाता है। कविता अपना पंख संजय के सिर पर एक कपड़े के सहारे बांध देती है।

कविता : चलो, अब नृत्य करें···आदिम नृत्य। लो, उसे बजाओ।

कविता एक डंडा लेकर नृत्य करती है

और संजय 'मेटल' की टी ट्रे बजाता हुआ उसके साथ नृत्य करने लगता है।

कविता : (नृत्य करती हुई जैसे वह कोई पूजा-गीत गाने लगती है।)
पवन झड़ लागी हो धीरे-धीरे
हे-हो-हे, कित उठी है बयरिया
पूरब-पश्चिम से हो धीरे-धीरे'''

दोनों एक संग नृत्य करते हुए गाने लगते हैं।

संजय : हो गोरी, पूरब से उठी है बयरिया
पछिम झड़ लागी हो धीरे-धीरे।

कविता : हे-हो-हे, खोलो जर केवड़िया
कलेजा मेरो कांपे हो धीरे-धीरे।

संजय : हो गोरी, सब खुली हैं केंवड़िया
जमुना जल बरसे हो धीरे-धीरे।

दोनों : (उन्मत्त) पवन झड़ लागी हो धीरे-धीरे
पवन झड़ लागी हो धीरे-धीरे।

दोनों एक-दूसरे को पकड़कर नाचने लगते हैं। कविता संजय के अंक में जैसे बेसुध होती चली जा रही है। सारे वातावरण-भर में वही संगीत छा जाता है।

पाँचवाँ दृश्य

(गौतम सोफे पर अस्त-व्यस्त पड़ा सो रहा है। कविता आती है और पूरे कमरे को निर्वाक् सा, गौतम को निहारती रह जाती है।)

कविता : गौतम! यह वही मेरा कमरा है ना, मेरा घर।

(फर्श पर गिरा रूमाल उठाकर देखती है)

कविता : यह ... गौतम ... वही है। एक-एक चीज़ ... वहीं पड़ी ...

कविता : दो गिलास ... वही दीवारें ... छत ... फ़र्नीचर ... कुछ बदला नहीं?

(दोनों को धीरे-धीरे सरकाती है।)

कविता : हम दोनों के बीच ...

(टेलीफ़ोन ठीक करती है।)

कविता : डरना नहीं चाहिए। कल कल्पना तक नहीं कर सकती थी। लेकिन आज इस समय ... तुम्हें देखकर ... पर वह सब ...

(एलबम उठाती है।)

कविता : मेरी पसंद। मेरा फ़ैसला, मेरा चुनाव।

(जली हुई मोमबत्ती देखती है।)

कविता : यह इस तरह चुपचाप सोया है? बीमार शिशु जैसा। विवश ...। पाबंदी क्यों रहे? बाहर ऊँचे पहाड़, गहरी नदियाँ ... हरे-भरे मैदान। यह जीवन ... इसपर

हमारा अधिकार क्यों नहीं ?

गिरी हुई तलवार उठाती है।

कविता : हम प्यार कर सकते हैं। संवाद कर सकते हैं…

तलवार म्यान में रख देती है।

कविता : सुबह के पांच बज चुके हैं पर अब भी रात बाकी है ? सुबह होगी…सबको चुनाव का अधिकार है…पर सही क्या है ? तुम्हारे और मेरे बीच जो था, वह गलती मेरी थी, सोचती थी, ऐसे ही चलता है…तुम और तुम…मैं और मैं…लेकिन अब नहीं—तुम और मैं, मैं और तुम, तुम और वह, वह और मैं। पर सब एक-दूसरे से बंधे हैं।

सोफे पर बैठती है।

गौतम : कौन ? अरे तुम आ गईं ?

कविता : (चुप है।)

गौतम : कब आईं ? एक सिगरेट पिलाओ।

मुंह में सिगरेट देकर जलाती है।

गौतम : काफी देर हो गई।…कुछ बोल क्यों नहीं रही हैं ?

कविता : पानी पियोगे ?

गौतम : बहुत अच्छी हो।

पानी देती है।

कविता : बिना विशेषण के बात नहीं कह सकते ?

गौतम : अभी करफ्यू टूटा नहीं।

कविता : टूट गया।

गौतम : पांच बजे टूटना था।

कविता : उससे कुछ पहले ही…

हमारा अधिकार क्यों नहीं ?

गिरी हुई तलवार उठाती है।

कविता : हम प्यार कर सकते हैं। संवाद कर सकते हैं...

तलवार म्यान में रख देती है।

कविता : सुबह के पांच बज चुके हैं पर अब भी रात बाकी है? सुबह होगी...सबको चुनाव का अधिकार है...पर सही क्या है? तुम्हारे और मेरे बीच जो था, वह गलती मेरी थी, सोचती थी, ऐसे ही चलता है...तुम और तुम...मैं और मैं...लेकिन अब नहीं—तुम और मैं, मैं और तुम, तुम और वह, वह और मैं। पर सब एक-दूसरे से बंधे हैं।

सोफे पर बैठती है।

गौतम : कौन ? अरे तुम आ गई ?

कविता : (चुप है।)

गौतम : कब आई ? एक सिगरेट पिलाओ।

मुंह में सिगरेट देकर जलाती है।

गौतम : काफी देर हो गई।...कुछ बोल क्यों नहीं रही हैं ?

कविता : पानी पियोगे ?

गौतम : बहुत अच्छी हो।

पानी देती है।

कविता : बिना विशेषण के बात नहीं कह सकते ?

गौतम : अभी करफ्यू टूटा नहीं।

: टूट गया।

पांच बजे टूटना था।

उससे कुछ पहले ही...

बोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी···तुम कुछ पूछती क्यों नहीं ?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है ?

कविता : वही लोग···

गौतम : कौन ?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज़ है ! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी ?

कविता : कुछ और पियोगे ?

गौतम : कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : पांच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी···आज तो रात-भर जगना था, पर···

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां···उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ···कैसी लगती है ? बड़ी तेज़ थी—झट पहचान लिया, जापान की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे ?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे ?···

कविता : अब तक नौकर नहीं आए ?

गौतम : 'सोडामिंट' की गोलियां कहां हैं ?

कविता : यहीं तो थीं।···कहां हैं ? (सहसा) यह देखो वहां

गौतम : क्या बजा है ?
कविता : पांच बजकर पांच मिनट ।

विराम

गौतम कमरे की हालत देखकर

गौतम : यहां कुछ लोग आए थे । तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं जानने में ?
कविता : अच्छा !
गौतम : हां, लोग ही अजीब थे ।
कविता : (चुप) ।
कविता : और दूं पानी ?
गौतम : बड़ी समझदार हो ।

कविता पानी देती है ।

गौतम : तुम कहां थीं ?
कविता : आकर नहा डालो ।
गौतम : इसकी जरूरत है क्या ?
कविता : (चुप) ।
गौतम : कहां थीं तुम ?
कविता : एक्टर सजय के यहां ।
गौतम : अच्छा-अच्छा, फिर तो समय अच्छा कटा होगा ।
कविता : नहा लो, जम्हाई चली जाएगी ।
गौतम : हां'''याद आया । आज हमारी 'मैरेज एनिवर्सरी' की रात थी ।
कविता : थी क्यों, है ।

विराम

गौतम : देखो ना ! पति अपने संग यह ले आया था पूरी

बोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी'''तुम कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है ?

कविता : वही लोग'''

गौतम : कौन ?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज है ! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी ?

कविता : कुछ और पियोगे ?

गौतम : कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : पांच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी'''आज तो रात-भर जगता था, पर'''

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां'''उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ'''कैसी लगती है ? बड़ी तेज थी—झट पहचान लिया, आपात की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे ?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे ?'''

कविता : अब तक नौकर नहीं आए ?

गौतम : 'सोर्डामिट' की गोलियां कहां हैं ?

कविता : यहीं तो थीं।'''कहां हैं ? (सहसा) यह देखो यहां

गौतम   बता क्या है ?

कविता   थक [illegible] ।

विराम

गौतम कमरे को [illegible] देखकर

गौतम : यहां कुछ लोग आए थे। तुम्हें कोई [illegible] नहीं जानते थे ?

कविता . अच्छा !

गौतम : हां, लोग ही अजीब थे।

कविता : (चुप)।

कविता . और दूं पानी ?

गौतम : बड़ी समझदार हो।

कविता पानी देती है।

गौतम : तुम कहां थी ?

कविता : आकर नहा डालो।

गौतम : इसकी जरूरत है क्या ?

कविता : (चुप)।

गौतम : कहां थीं तुम ?

कविता : एक्टर समय के यहां।

गौतम : अच्छा-अच्छा, फिर तो समय अच्छा कटा होगा।

कविता : नहा लो, जम्हाई चली जाएगी।

गौतम : हां...याद आया। आज हमारी 'मैरेज एनिवर्सरी' की रात थी।

कविता : थी क्यों, है।

विराम

[illegible] : [illegible] ना ! पति [illegible] ले आया था पूरी

बोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी'''तुम कुछ पूछतीं क्यों नहीं?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है?

कविता : वही लोग'''

गौतम : कौन?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज है! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी?

कविता : कुछ और पियोगे?

गौतम : कुछ पूछतीं क्यों नहीं?

कविता : पांच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी'''आज तो रात-भर जगना था, पर'''

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां'''उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ'''कैसी लगती है? बड़ी तेज थी—झट पहचान लिया, जापान की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे?'''

कविता : अब तक नौकर नहीं आए?

गौतम : 'सोर्बामिट' की गोलियां कहां हैं?

कविता : यहीं तो थीं।'''कहां हैं? (सहसा) वह देखो वहां

गौतम : क्या बजा है ?

कविता : पांच बजकर पांच मिनट।

विराम

गौतम कमरे की हालत देखकर

गौतम : यहां कुछ लोग आए थे। तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं जानने में ?

कविता : अच्छा !

गौतम : हां, लोग ही अजीब थे।

कविता : (चुप)।

कविता : और दूं पानी ?

गौतम : बड़ी समझदार हो।

कविता पानी देती है।

गौतम : तुम कहां थी ?

कविता : जाकर नहा डालो।

गौतम : इसकी जरूरत है क्या ?

कविता : (चुप)।

गौतम : कहां थी तुम ?

कविता : एक्टर सक्सम के यहां।

गौतम : अच्छा-अच्छा, फिर तो समय अच्छा कटा होगा।

कविता : नहा लो, जम्हाई चली आएगी।

गौतम : हां...याद आया। आज हमारी 'मैरेज एनिवर्सरी' की रात थी।

कविता : थी क्यों, है।

विराम

गौतम : देखो ना ! पति अपने [illegible] यह ले आया था पूरी

बोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी'''तुम कुछ पूछतीं क्यों नहीं?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है?

कविता : वही लोग'''

गौतम : कौन?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज है! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी?

कविता : कुछ और पियोगे?

गौतम : कुछ पूछतीं क्यों नहीं?

कविता : पांच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी'''आज तो रात-भर जगना था, पर'''

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां'''उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ'''कैसी लगती है? बड़ी तेज थी—झट पहचान लिया, जापान की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे?'''

कविता : अब तक नौकर नहीं आए?

गौतम : 'सोडामिंट' की गोलियां कहां हैं?

कविता : यहीं तो थीं।'''कहां हैं? (सहसा) यह देखो यहां

गौतम : क्या बजा है ?

कविता : पाच बजकर पांच मिनट ।

विराम

गौतम कमरे की हालत देखकर

गौतम : यहां कुछ लोग आए थे। तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं जानने में ?

कविता : अच्छा !

गौतम : हां, लोग ही अजीब थे।

कविता : (चुप)।

कविता : और दूं पानी ?

गौतम : बड़ी समझदार हो।

कविता पानी देती है।

गौतम : तुम कहां थीं ?

कविता : जाकर नहा डालो।

गौतम : इसकी जरूरत है क्या ?

कविता : (चुप)।

गौतम : कहा थीं तुम ?

कविता : एक्टर संजय के यहां।

गौतम : अच्छा-अच्छा, फिर तो समय अच्छा कटा होगा।

कविता : नहा लो, जम्हाई चली आएगी।

गौतम : हां…याद आया। आज हमारी 'मैरेज एनिवर्सरी' की रात थी।

कविता : थी क्यों, है।

विराम

गौतम : देखो ना! पति अपने…यह ले आया था पूरी

बोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी'''तुम कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है ?

कविता : वही लोग'''

गौतम : कौन ?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज़ है ! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी ?

कविता : कुछ और पियोगे ?

गौतम : कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : पांच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी'''आज तो रात-भर जगना था, पर'''

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां'''उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ'''कैसी लगती है ? बड़ी तेज थी—झट पहचान लिया, जापान की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे ?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे ?'''

कविता : अब तक नौकर नहीं आए ?

गौतम : 'सोडामिंट' की गोलियां कहां हैं ?

कविता : यहीं तो थीं।'''कहां हैं ? (सहसा) वह देखो वहां

गौतम : क्या बजा है ?

कविता : सात बजकर पाँच मिनट।

विराम

गौतम कमरे की हालत देखकर

गौतम : यहाँ कुछ लोग आए थे। तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं जानने में ?

कविता : अच्छा !

गौतम : हाँ, लोग ही अजीब थे।

कविता : (चुप)।

कविता : और दूँ पानी ?

गौतम : बड़ी समझदार हो।

कविता पानी देती है।

गौतम : तुम कहाँ थीं ?

कविता : जाकर कहाँ जाती।

गौतम : इसकी जरूरत है क्या ?

कविता : (चुप)।

गौतम : कहाँ थीं तुम ?

कविता : एक्टर समय के यहाँ।

गौतम : अच्छा-अच्छा, फिर तो समय अच्छा कटा होगा।

कविता : नहा लो, जम्हाई चली जाएगी।

गौतम : हाँ···याद आया। आज हमारी 'मैरेज एनिवर्सरी' की रात थी।

कविता : थी क्यों, है।

विराम

गौतम : देखो ना ! पति ... ले आया था पूरी

गोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी'''तुम कुछ पूछती क्यों नहीं ?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है ?

कविता : वही लोग'''

गौतम : कौन ?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज़ है! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी ?

कविता : कुछ और पियोगे ?

गौतम : कुछ पूछती क्यों नहीं ?

कविता : पाच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी'''आज तो रात-भर जगना था, पर'''

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां'''उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ'''कैसी लगती है ? बड़ी तेज थी—झट पहचान लिया, जापान की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे ?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे ?'''

कविता : अब तक नौकर नहीं आए ?

गौतम : 'सोर्बामिट' की गोलियां कहां है ?

कविता : यहीं तो थीं।'''कहां है ? (सहसा) वह देखो वहां

गौतम : क्या बजा है ?

कविता : पांच बजकर पांच मिनट।

विराम

गौतम कमरे की हालत देखकर

गौतम : यहां कुछ लोग आए थे। तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं जानने में ?

कविता : अच्छा !

गौतम : हां, लोग ही अजीब थे।

कविता : (चुप)।

कविता : और दूं पानी ?

गौतम : बड़ी समझदार हो।

कविता पानी देती है।

गौतम : तुम कहां थीं ?

कविता : जाकर नहा डालो।

गौतम : इसकी जरूरत है क्या ?

कविता : (चुप)।

गौतम : कहां थीं तुम ?

कविता : एकटर सजन के यहां।

गौतम : अच्छा-अच्छा, फिर तो समय अच्छा कटा होगा।

कविता : नहा लो, जम्हाई चली जाएगी।

गौतम : हां'''याद आया। आज हमारी 'मैरेज एनिवर्सरी' की रात थी।

कविता : थी क्यों, है।

विराम

गौतम : देखो ना ! पति अपने संग्रहालय से आया था पूरी

बोतल। मुझे भी साथ देना ही पड़ा। औरत निहायत बातूनी—जैसे बात नहीं, खेल करती थी'''तुम कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : ठीक है।

गौतम : क्या ठीक है ?

कविता : वही लोग'''

गौतम : कौन ?

कविता : वही खेल।

गौतम : बड़ी मुश्किल से वे लोग गए। पुलिस के रिश्तेदार थे वे लोग। फोन किया। 'पुलिस वैन' आई, चले गए। पुलिस भी क्या चीज है ! (सहसा) तुम्हें प्यास नहीं लगी ?

कविता : कुछ और पियोगे ?

गौतम : कुछ पूछतीं क्यों नहीं ?

कविता : पांच बज चुके हैं।

गौतम : छोड़ो भी'''आज तो रात-भर जगना था, पर'''

कविता : यह टाई तो उतार दो।

गौतम : अरे हां'''उसी औरत ने बातों-बातों में मेरी टाई खींच ली। फिर यह ढीली गांठ—कहने लगी, ऐसे बांधिए। बताओ'''कैसी लगती है ? बड़ी तेज थी—झट पहचान लिया, जापान की है। और पूछो ना उसकी बातें।

कविता : पूछ तो रही हूं, क्या पियोगे ?

गौतम : (आवेश में) क्या पियोगे ?'''

कविता : अब तक नौकर नहीं आए ?

गौतम : 'सोडामिंट' की गोलियां कहां हैं ?

कविता : यहीं तो थीं।'''कहां हैं ? (सहसा) वह देखो वहां

गिरी है।

गौतम : जरा उठाओ तो।

कविता : हां।

गौतम : अपने बटन बंद करो।

कविता : अंगा बटन छिताः…

गौतम : अच्छा, चाय ही ले आओ…आज क्या है हमारी? तुम्हारे ही मुंह से अच्छा लगता है। देखो न, उसने मोमबत्ती जला दी थी…वह नाचने लगी। (सहसा) छोड़ो भी अब सोडामिंट की गोलियां।

कविता : अभी थोड़ी-सी रात है।

गौतम : तुम्हारे गले की…नेकलेस !…

कविता : कहीं गिर गई।

गौतम : कहां ?

कविता : चाय ले आती हूं।

गौतम : अगर मैं तुम्हें पीछे से पकड़ लूं ?

कविता अंदर जाती है। गौतम 'सोडामिंट' की गोलियां खाता है। कमरा और ठीक करता है। टेप सुनता है। सिगरेट जलाकर संगीत की लय में पीता है, धुआं छोड़ता चलता है, हाथ उठाता है। कविता चाय ले आती है।

गौतम : हां, हां, हां, संगीत की लय में…कहीं बेसुरा नहीं।

कविता : क्या ?

गौतम : (ट्रे लेकर) इस तरह…इस तरह…उसी सुर-ताल में रखता है, उसी लय में और सिगरेट पीता

गौतम : तुमने यह पूछा, 'हेयर-पिन' कहां से आई है ?
कविता : मैं पूछना नहीं चाहती थी ।
गौतम : क्यों···क्यों नहीं ।
कविता : अच्छा बताओ, कहां से आई ? किसकी है ?
गौतम : तुम्हारी नहीं हो सकती ?
कविता : नहीं ।
गौतम : पर क्यों नहीं ?
कविता : मैं 'हेयर-पिन' नहीं लगाती ।
गौतम : क्यों नहीं ?
कविता : क्योंकि नहीं लगाती ।
गौतम : हम झगड़ा नहीं कर सकते ?
कविता : क्यों नहीं ?
गौतम : तो···तो···
कविता : यह पर्दा कैसे फटा ?
गौतम : कमज़ोर था ।
कविता : तुम्हारी मिल का बना है ।
गौतम : कमज़ोर, मज़बूत कैसे बना सकता है ?
कविता : विज्ञापन तो मज़बूती का था ।
गौतम : विज्ञापन कमज़ोर को मज़बूत नहीं बना सकता ?
कविता : जैसे तुम, वैसी मैं ।
गौतम : जैसी तुम, वैसा मैं ।

गौतम : हाँ, कहीं कुछ भी।
कविता : रुक क्यों गए ?
गौतम : घर कभी एकाएक क्या कुछ हो सकता है, यह कोई नहीं जानता।
कविता : जीवन नाटक की तरह निश्चित नहीं होता।
गौतम : सारी चीजें बिखरी पड़ी हैं। ठीक क्यों नहीं करती ?
कविता : आज यह कमरा अच्छा लग रहा है।
गौतम : तुम भी कितनी अच्छी लग रही हो।
कविता : यह 'हेयर-पिन'…
गौतम : यह क्या दारोगा की तरह…?
कविता : फिर क्यों कहा…मैं कुछ जानना ही नहीं चाहती ?
गौतम : जानने के लिए यही है ?
कविता : तुम्हें यह आदत कहाँ से मिली ?
गौतम : जानने के लिए बड़ी-बड़ी चीजें पड़ी हैं।
कविता : बिना छोटी चीज जाने ?
गौतम : लोगों का दिमाग ही छोटा होता है।
कविता : स्त्री घर में रहती है।
गौतम : दुनिया इससे बाहर है।
कविता : उसकी दुनिया यही है।
गौतम : किसने कहा ?
कविता : किसीने नहीं, यही उसका स्वभाव है।
गौतम : तुम्हें कब मैंने रोका ?
कविता : (चिढ़ाकर) तुम्हें कब रोका ?
गौतम : मगर तुम…
कविता : यही तो।

गौतम : हंसना है तो खुलकर। हंसो पर भी क्या रोक ?

दोनों हंसते हैं।

कविता : ऐसा कभी सोचा भी न था।

हंसती है।

गौतम : टैक्सटाइल टाइगर...माने जुलाहा।

हंसता है।

कविता : यह अलबम ?

गौतम : हां।

कविता : उसने देखा ?

गौतम : तुम्हारा नाम कितना अच्छा है...? कविता।

कविता : कविता...

गौतम : जुलाहा...जु...ला...हा।

कविता : संजय।

गौतम : तुम्हें भी दुगनी दवा लेनी होगी आज। तुमने भी किसके घर में पनाह ली !

कविता : क्या ?

गौतम : उसका सूना घर और वह। सारी रात...उसने जरूर कहा होगा, मतलब जब तुमने उसके कमरे में पांव रखा होगा, कि भीतर नौकरानी है,-या कुछ...

कविता : ऐसा कुछ नहीं कहा उसने।

गौतम : क्यों शरमाती हो ? 'दिस इज नेचुरल'।

कविता : उसने कहा, 'घर में कोई नहीं है...'

गौतम : और फिर भी तुम वहां रुक गईं ?

कविता : कहां जाती ?

गौतम : तुम्हें डर नहीं लगा ?

है।'''कुछ देर और बीती। मैंने फिर कहा, बहन जी कहा हैं? उसने कहा, चाय लेकर आ रही हैं।

गौतम : (सिगरेट सुलगाता है।)

कविता : थोड़ी देर बाद वह खुद चाय लेकर आया। मुझे शक हुआ, डर भी गई। बहन जी कहा हैं? उसने बताया, उन्हें बेतरह चक्कर आ रहा है। दवा दे दी है। वह सो गई है। मुझे इत्मीनान हो गया और हम लोग कॉफी पीने लगे।

गौतम : कॉफी या चाय?

कविता : कॉफी।

गौतम : शुक्र है।

कविता : फिर विवाह का 'अलबम' दिखाया।

गौतम : अलबम!

कविता : कश्मीर में सुहागरात। नये बंगले में। बर्फ पर'''

गौतम : मतलब, यही सब होता रहा, कोई खास बात नहीं?

कविता : यह सब उसी खास बात की भूमिका थी।'''फिर वह ड्रिंक ले आया। मैंने पूछा, आपकी 'वाइफ' की तबीयत कैसी है? वह बोला, भीतर से कमरा बंद कर सो रही हैं।

गौतम : ऐसा नहीं हो सकता।

कविता : जो हुआ है, सुनते क्यों नहीं?

गौतम : वह कोई नहीं बता सकता।

कविता : बता तो रही हूं। (विराम) मैंने ड्रिंक लेने से इन्कार किया, वह अकेले पीने लगा।

गौतम : यह कैसे हो सकता है।'''

कविता : फिर बड़ी-बड़ी बातें करने लगा।
गौतम : 'आई लाइक स्ट्रेंजर्स'।
कविता : मेरी उंगलियों की तारीफ करने लगा।
गौतम : नाम में शुभ क्या होता है ?
कविता : एकाएक मेरी ओर झपटा। मैं उसकी बीवी को पुकारने लगी। दरवाजा पीटने लगी, और वह बोला, बीवी घर में नहीं।
गौतम : '''कायर'''बुजदिल !
कविता : फिर वह मुझे दबोच लेने के लिए दौड़ा।
गौतम : उसने साहस दिया—नया विश्वास—नया जीवन।
कविता : शराब पी थी उसने।
गौतम : एक अभूतपूर्व अनुभव, एक अभूतपूर्व विश्वास'''
कविता : मेरे साथ बलात्कार हुआ है।
गौतम : तुम सच क्यों नहीं बोल सकते ?
कविता : सच कह रही हूं।
गौतम : मैं जानता हूं तुम्हें।'''तुम एक आदर्श पत्नी हो'''
कविता : नहीं।
गौतम : मेरा विश्वास है।
कविता : वह टूटना चाहिए।
गौतम : टूटना चाहिए ?

सन्नाटा

कविता : आदर्श पति'''आदर्श पत्नी !
गौतम : यह विश्वास जरूरी है'''
कविता : वह झूठ है।

विराम

कविता : गुरु अब हमारी मदद नहीं कर सकता ।

गौतम : हमारा दाम्पत्य जीवन सुखी है । हम दोनों प्रतिभावान हैं । हम सुख-चैन की नींद सोते हैं । हमारे खानदान का नाम है । हमें ईश्वर ने सब-कुछ दिया है । हमें किसी चीज़ की कोई कमी नहीं । हम सुखी हैं ।

कविता : जीवन इसी तरह बिना किसी परिवर्तन के चलता रहता है—बड़ी से बड़ी घटनाएं उसमें खो जाती हैं—उनकी पहचान तक नहीं रह जाती, पर क्षण अचानक आता है—एक ऐसा क्षण—जीवन-नाटक की तरह निश्चित नहीं—हो नहीं सकता ।

सन्नाटा

गौतम : शहर में इतना बड़ा दंगा हुआ । कितने जले, मरे, तबाह हुए और हमें कुछ पता नहीं ! कुछ जानने की इच्छा ही नहीं हुई ।

कविता : हम एक-दूसरे को नहीं जानते ।

गौतम : जितना ज़रूरी है, उतना जानते हैं ।

कविता : क्या जानते हैं ?

गौतम : जितना जानते हैं ।

कविता : वह क्या है ?

गौतम : तुम्हें पता होना चाहिए ।

कविता : फ़ायदा ?

गौतम : हम सुखी हैं ।

कविता : क्यों ?

गौतम : जाओ । कपड़े बदल लो ।

कविता अन्दर जाती है ।

गौतम : यह क्या बकवास कर रहा हूं ! कब तक इस झूठ के भंवर में पड़ा रहूंगा ! ये झूठे शब्द कब तक मुझे घेरे रहेंगे ! यह कसमू कब टूटेगा ? हे ईश्वर, इतना भी साहस नहीं कि स्वीकार कर सकूं। क्या हो गया है हमें ? जो इतना सच है, प्रकट है, निर्भय होकर क्यों नहीं कह पाता ? हे ईश्वर, मुझे बल दो। कविता··· कविता···सुनो···

कविता आती है और उसकी उन्मत हंसी।

कविता : हेअ···मेरी ओर देखो···देखो···अब डरते क्यों हो ?

गौतम : क्या हो गया ?

कविता : बस, हो गया। (हंसती है।) डरो नहीं···

गौतम : तुम्हें डर नहीं ?

गौतम को छूती है।

कविता : देखो, मैंने कोई प्रश्न नहीं किया।

गौतम : विश्वास करो, पहले मुझमें कोई प्रश्न नहीं था, फिर झूठे प्रश्नों का सहारा लिया···और अब तुम्हारा··· फिर मुझमें पहली बार प्रश्न जागे···फिर निरुत्तर कर दिया।

कविता : वह जिस नाटक का 'रिहर्सल' कर रहा था, उसका नाम था 'नरक का रहस्य'। हां, झूठ और कायरता ही तो नरक है। उस नाटक की कथा···वह युवक और युवती। मैं अभिनय कर सकती हूं। मैं वह नहीं हूं जो थी···मैं जो थी···वह नहीं थी···वह नहीं थी···मुझे होना पड़ा था। पर क्यों ? कम से कम उस नाटक में

भीतर या करफ्यू नहीं तोड़ते, वही बाहर करफ्यू लगाते हैं…और उसे तोड़ने के लिए अपराध करते हैं। उसे वक्त मे लेकर पहली बार मुझे ईश्वर की याद आई… तुम्हारी याद आई…

भीतर से मनीषा आती है।

मनीषा : हैलो।

दोनों उसे अपलक देखने लगते हैं।

गौतम : मेरी पत्नी कविता…मनीषा।

कविता : मनीषा।

मनीषा : और दो परिचय।

कविता : कोई जरूरत नहीं।

मनीषा : विश्वास नहीं करना चाहिए।

गौतम अन्दर जाने लगता है।

कविता : अब कहा भागते हो?

रोक लेती है।

मनीषा : पहले मुझे यहा से भागना पड़ा था।

कविता : मैं भी भागी थी एक बार।

मनीषा : बाहर पुलिस ने पकड़ लिया। बोला, 'स्ट्रीटवाकर'। (हंस पड़ती है।) पुलिस स्टेशन पर इन्सपेक्टर ने कहा, 'नक्सलाइट'—ठीक उसी तरह, जैसे लोग अब तक मुझे 'डियर, डार्लिंग, बेब, पनर्ट, स्वीटी' वगैरह-वगैरह कहकर मेरा अपमान करते थे। (हंसती है।) एक ओर 'स्ट्रीटवाकर', दूसरी ओर 'नक्सलाइट'… ताज्जुब है न!

कविता अजब तरह से हंस पड़ती है और

अपने को संभालती हुई सोफे पर जैसे
गिर पड़ती है।

कविता : रहे चाहते सुख, बिन जाने परिभाषा सुख की
ठहरे जग के क्रमशः करीने
रहे मौन हम भूल सहसा बहते जग की
कथा है
वह आनन्द जो कभी प्रगट नहीं हुआ
वह अमर जीवन जो अब तक जिया नहीं गया
और जिस पर
किसीको शोक तक नहीं हुआ।

सन्नाटा

गौतम : यह सब क्या कह रही हो ?

कविता : (उठती है।) न दुख है, न सुख
सत्य वह है जो इन्हें मिलाता है।
न रात है, न प्रातःकाल
सत्य वह है जो इन्हें जोड़ता है।

गौतम : कविता ! जानती हो यह कौन है ?

कविता : जानना शुरू किया है, मैं कौन हूं।

गौतम : यह कौन है ?

कविता : यह हैं, इतना ही काफी है। आज मैं अपने 'मैं' से अलग हटकर जब अपने आपको देख रही हूं तो पहली बार अनुभव हो रहा है, जो दूसरा है, वह है, उसके बारे मे कोई निर्णय मैं नहीं दे सकती। परिचय का मतलब है निर्णय दे देना और एक फैसला पा जाना। यह पाना-देना भ्रम है।

मनीषा : यह आपकी पत्नी है ?

गौतम : जी हां, क्यों ?

मनीषा : कोई पत्नी कभी इस तरह सोच सकती है, मेरे लिए यह आश्चर्यजनक है।

कविता : क्या हम सब आश्चर्यजनक नहीं ? अपने भीतर हम सब कोई और हैं। जो हैं, उसे कभी छुआ नहीं। जो हैं, उसे कभी देखा नहीं। जब देखा तो उसे कभी कबूल नहीं किया। संबंधों के एक परिचय जाल में हम जकड़े हुए हैं। हमें दूसरों से एक परिचय मिल गया है। वही हमारी परिभाषा है। हमने कभी प्रश्न नहीं किया, आखिर मैं कौन हूं ? मेरा मैं क्या है ? दूसरों की दी हुई परिभाषा, परिचय हम क्यों ढो रहे हैं ? जो नहीं है, उसे हम क्यों स्वीकार कर लेते हैं ? जो है, उसे स्वीकार क्यों नहीं करते ?

मनीषा : स्वीकार करते ही हम छोटे हो जाएंगे, यह जो आदिम भय है यही हमें स्वीकार नहीं करने देता।

कविता : तुम्हें भी भय है ?

मनीषा : मैं स्वतंत्र हूं, यही है मेरा भय, कि मेरी स्वतंत्रता कोई छीन न ले। आज मैंने पहली बार देखा'''हां देखा, पहली बार देखा—मेरी स्वतंत्रता केवल फैशन है। इसमें कोई दम नहीं। इसे मैंने अर्जित नहीं किया। यह मेरे रक्त और संस्कार में नहीं, वरना मैं इतनी वाचाल नहीं होती। मैं अपनी बाहरी स्वतंत्रता को अपनी मुक्ति मानती थी। इसीलिए मैं स्वतंत्र बनती थी,

प्रेम करती थी, स्वतंत्र होती नहीं थी। बनने और होने का अन्तर आज मालूम हुआ। इतनी बड़ी कीमत देकर…

कविता : इतनी बड़ी कीमत देकर…!

गौतम : अब तक नहीं जानता था, कभी जानना चाहा भी नहीं, कौन हूं मैं? क्या है मेरा जीवन?

कविता : मैं अभी लौटकर अब आई…

गौतम : एक क्षण मुझे लगा मैं तुमसे अब ईमानदार हो जाऊं। मैं स्वीकार कर लूं मैं क्या हूं। पर दूसरे ही क्षण मैं झूठ बोलने लगा। झूठी कहानियां गढ़कर तुम्हें बताने लगा। (रुककर) आज मुझे लगा, मैं जो कुछ करता हूं, उसका कर्त्ता मैं नहीं हूं। मैं बहता हूं—जैसे पेड़ से टूटकर कोई पत्ता हवा में उड़ता है, जैसे पानी की धार में कोई तिनका बहता है।

कविता : झूठ का सहारा मैंने लिया। मेरे प्रेम में था झूठ, मेरे विवाह में है झूठ। मेरे हर व्यवहार में झूठ ही झूठ है। सोचती थी अब यहां लौटकर सच रहूंगी, सच बोलूंगी। पर तुमसे बातें करते ही सरासर झूठ बोलने लगी। एक ऐसी झूठी कल्पित कहानी गढ़ने लगी……

गौतम : पर वह कहानी झूठी कल्पित नहीं थी, जो यहां हुआ है, वही थी वह।

कविता : पर मैं दूसरों की घटनाएं क्यों सुनाती हूं?

गौतम : मैं दूसरा हूं क्या?

कविता : तुम दूसरे हो, तुम तुम हो, मैं मैं हूं—यही तो कभी स्वीकार नहीं किया, तभी तो इतने झूठों की जरूरत

पड़ी।

मनीषा : अकेला कोई एक सच नहीं बोल सकता। उसके लिए दो चाहिए। जैसे अकेले कोई लड़ नहीं सकता,... अकेले कोई हो नहीं सकता। (रुककर) आज रात आप दोनों की शादी की सालगिरह थी!...

कविता : थी नहीं, है।

कविता तेज़ी से अंदर जाती है। मनीषा मोमबत्तियाँ जलाती है।

गौतम : ज़रा-सी तेज़ हवा बहेगी, ये मोमबत्तियाँ बुझ जायेंगी। तुम कह सकती हो कि ये फिर जला दी जायेंगी। प्रकाश, फिर अंधकार, फिर प्रकाश, एक से दूसरे में जो गति है, यात्रा है, क्या यही जीवन नहीं? यह केवल है? केवल है। ऐसा 'है' जो एक क्षण भी कहीं निर्भर नहीं। हर क्षण जो बदल रहा है, इसे 'है' भी कैसे कहा जा सकता है? मनीषा, मनीषा!

मनीषा : मैं अपने आपको उत्तर दे लूँ, यही बहुत है। सबको अपना उत्तर खुद ढूँढ़ना होगा।

गौतम : खुद! अकेले! यही तो हम करते रहे हैं। जो कुछ किया, कोई प्रश्न जगा, अकेले चुपचाप, 'जस्टीफ़ाई' कर लेते हैं।

मनीषा : वह अपने आपको अस्वीकारना है।

गौतम : हमने यही किया है।

मनीषा : स्वीकार करते ही हम कर्ता हो जाते हैं। वह कर्ता अकेला व्यक्ति ही होता है। पर स्वीकार करते ही वह सामाजिक हो जाता है।

हवा के चलते प्रकाश को गौतम को